श्री राम: शरणं मम। श्री सीतारामाभ्यां नमः

राम ब्रह्म चिन्मय अविनाशी

लेखक

श्री श्री १०८ श्री रघुवरदास जी महाराज

श्री रामःशरणं मम

राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी

सम्वत् – २०५५

सन् – १९९८

प्रथम संस्करण – ५०००

मूल्य – १५ रूपये

लेखक -

श्री श्री १०८ श्री रघुवर दास जी रामायणी

स्थान – श्री राम बाग, वासुदेव घाट माझा अयोध्या, फैजाबाद

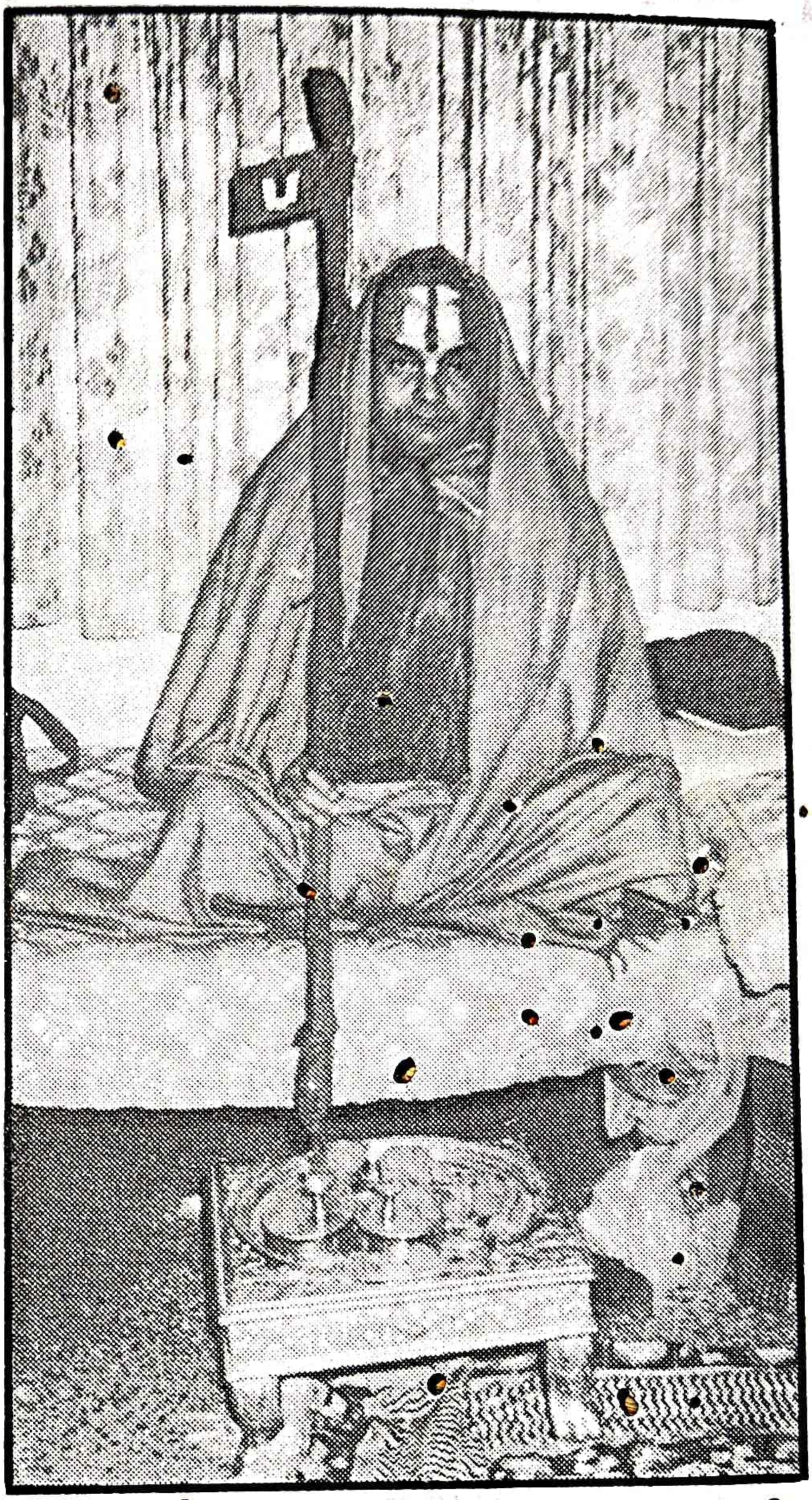

आशीर्वचन

श्री रामो विजयतेतराम्

बड़े प्रमोद का विषय है कि श्री रघुवर दास जी रामायणी ने **"राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी"** नामक पुस्तक लिखी है। यह पुस्तक सरल सुबोध एवं जन साधारण के लिए बड़ी उपयोगी है। श्री राम जी तो वैदिक रूप में ब्रह्म स्वरूप हैं जिसका प्रतिपादन गोस्वामीपाद रहसि में मानस में लिखा है। **"चित्रामस्य केतवो राम विन्दन्** (ऋग्वेद), **"प्रवोचो रामस्थात्** (ऋग्वेद) आदि वेदवाक्यों की व्याख्या मानस में किया है। उसका किंचित् दिग्दर्शन रामायणी जी ने कराया है। इसका प्रचार प्रसार हो, जनता लाभ प्राप्त करें। यह मेरी शुभकामना है।

भवदीय!

जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी हर्याचार्य जी महाराज

हरिधाम एवं काशीपीठ

अयोध्या

शुभकामना

अद्वितीय ग्रन्थ श्री रामचरितमानस की रचना करके श्री गोस्वामी तुलसीदास जी जनमानस के हृदयपटल पर सदैव के लिए चित्रित हो गये हैं। मानस की चौपाइयों को गाकर एक बच्चे से लेकर वृद्ध तक आनन्द की अनुभूति करता है। ऐसे मानस की रसमयी कथा कहते हुए रामायणी श्री रघुवर दास जी लोगों में आनन्द की धारा प्रवाहित करते रहते हैं। रामायणी जी एकनिष्ठ अनन्य रामोपासक हैं। इन्होंने **"राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी"** नामक ग्रन्थ की रचना करके श्री रामजी के परस्वरूप का बोध कराने का सरलतम ढंग से अकथ प्रयास किया है।

ब्रह्म ही सत्–चित्–आनन्द स्वरूप, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी और सबमें रमण करने वाला है। उपर्युक्त ब्रह्म के सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त श्रीराम जी हैं। अर्थात् श्रीराम जी ही पूर्ण ब्रह्म हैं, ऐसा प्रमाण शास्त्रों में मिलता है यथा–

रमन्ते योगिनोऽनन्ते सत्यानन्दे चिदात्मनि।
इति राम पदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते।। (रा०ता०उ०)
रमते सर्वभूतेषु स्थावरेषु चरेषु च।
अन्तरात्मास्वरूपेण यश्च रामेति कथ्यते।।(आ०रा०)

इसी विषय का दिग्दर्शन रामायणी जी ने अपनी रचना **"राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी"** में किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ जन साधारण के लिए श्रीराम जी के पूर्ण ब्रह्म तत्त्व का बोध कराने में उपयोगी सिद्ध होगा, यही हमारी श्रीराम जी और श्री हनुमान जी से मंगल एवं शुभकामना है।

भवदीय

श्री टीलाद्वारा गाद्याचार्य मंगलपीठाधीश्वर श्री महान्त माधवदास

जी महाराज, डाकोर एवं मुम्बई।

धन्यवाद

"राम ब्रह्म चिन्मय अविनाशी" शीर्षक नामक ग्रन्थ में उदीयमान सूर्य की भाँति रामायणी जगत में माननीय श्री रघुवर दास जी ने श्रीराम जी परस्वरूप परमात्मा ही हैं। मानस के आधार पर बहुत ही सुन्दर सिद्ध किया है।

अतः प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज के रामचरितमानस के आधार पर श्री रामायणी जी ने श्रीराम जी को पूर्ण ब्रह्म सिद्ध करने का प्रशंसनीय प्रयास एवं स्पष्टीकरण किया है। इसके लिए विद्वान लेखक श्री रघुवर दास जी को बहुत–बहुत धन्यवाद।

भवदीय

मानस महारथी त्यागी

प्रयागदास आश्रम, सतना रोड मार्ग

चित्रकूट धाम उ० प्र०

लेखक का उद्‌गार

आज का समाज जो श्रीराम के बारे में ऐसी शंकाए प्रगट करते रहते हैं कि श्रीराम दसरथ के पुत्र थे। वे पूर्ण ब्रह्म या ईश्वर नहीं है। मैं इस पुस्तक में गोस्वामी तुलसीदास जी के श्री रामचरितमानस तथा अन्य ग्रन्थ का प्रमाण देकर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया हूँ कि श्रीराम ही पूर्ण ब्रह्म हैं। वे पृथ्वी पर मनुष्य को मनुष्योचित सत्कर्म, सद्धर्म, आचार, विचार और सदाचार की शिक्षा देने के लिए अवतरित हुए। जैसा कि गीता के तृतीय अध्याय के २१ वें श्लोक में वर्णित है–

''यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।

स यत्प्रमाणं कुरूते लोकस्तदनुवर्तते।।'' ३/२१

अर्थात्–श्रेष्ठ पुरूष जो–जो आचरण करता है, अन्य पुरूष भी वैसा–वैसा ही आचरण करते हैं। वह जो कुछ प्रमाण कर देता है, समस्त मनुष्य–समुदाय उसी के अनुसार बरतने लग जाता है।

परमात्मा जब भी धरा धाम पर आता है तो वह केवल राक्षसों का संहार करना या भक्तों की रक्षा करने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि शास्त्रों में तो यह संकेत मिलता है कि वह राक्षसों का संहार तो किसी भी प्रकार कर सकता है परन्तु मनुष्य को अपने कर्तव्य के पालन की शिक्षा कैसे प्राप्त होगी। जैसा कि श्रीमद्‌भागवत में वर्णित है–

''मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं रक्षोवधायैव न केवलं विभोः। भा०

अर्थात्–आपका यह मनुष्य अवतार केवल राक्षसों का वध करने के लिए नहीं हुआ बल्कि मनुष्यों को शिक्षा देने के लिए हुआ है।

इसलिए यदि कोई नासमझ यह कहता है कि श्रीराम एक राजा के पुत्र है तो उन्हे यह ज्ञात होना चाहिए कि यह जो हमारे शास्त्रों के अनेक प्रमाण मिलते हैं कि श्रीराम पूर्ण ब्रह्म हैं उस पर उनको स्वयं विचार करना चाहिए। हमारे यहां किसी प्रकार का संदेह होने पर शास्त्र ही प्रमाण है।

स्वयं राक्षसराज रावण ने भी श्रीराम को ब्रह्म स्वीकार किया था – यथा–

''जानामि सीता जनक प्रसूतां जानामि रामं मधुसूदनञ्च।

वधं च जानामि निजं दसास्य तथापि सीतापि न समर्पयामि।।''

जब ऐसे लोग भी श्रीराम को ब्रह्म स्वीकार कर लेते हैं तब जो श्रीराम को ब्रह्म नहीं स्वीकार करता है उसे रावण से भी बढ़कर राक्षस कोटि मे ही समझना चाहिए।

श्रीराम स्वतराज स्तोत्र मे भी ऐसा ही वर्णित है

"कौशल्या नन्दनं रामं धनुवाणधरं हरिम्।"

अर्थात्– कौशल्या माँ से प्रगट हुए राम स्वयं पूर्ण ब्रह्म परमात्मा हैं।

स्कन्धपुराण काशी खण्ड मे भी शिवजी ने ऐसी ही मान्यता दी है, यथा–

"पेय पेयं श्रवण पुटके रामनाभिरामं
धेयं धेयं मनसि सततं तारकं ब्रह्मरूपम्।
जल्प्यं जल्प्यं प्रकृति विकृतौ प्राणिनां कर्णमूले
विथ्यां विथ्यां अटति जटिलःकोऽपि काशी निवासी।।"

इन सारे प्रमाणों को मैं इसलिए प्रस्तुत कर रहा हूँ कि उन मूर्खों को यह तो समझना चाहिए कि जब सारे ग्रंथ वेद, पुराण और शास्त्र श्रीराम को ब्रह्म ऐसा स्वीकार करते हैं तब भी तर्क करते रहते हैं कि क्या श्रीराम पूर्ण ब्रह्म हैं?

ऐसे तो मैं मुख्यतः गोस्वामी तुलसीदास जी के श्रीरामचरित मानस का ही प्रमुख आधार लेकर तथा तुलसीदास जी के सप्त सोपान मे क्रमशः जो प्रत्येक सोपान में किसी न किसी महापुरूष के द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि श्रीराम पूर्ण ब्रह्म हैं, को लक्ष्य करके इस पुस्तक को तैयार किया हूँ। इसके साथ–साथ अन्य ग्रंथों का भी प्रमाण प्रस्तुत किया गया है।

इस पुस्तक को संकलित करने मे प्रखर बुद्धि के वयस्क संत आचार्य श्री रामाधार दास का पूर्ण योगदान रहा है मैं उनके इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए आभार के साथ–साथ यह आशा करता हूँ कि अग्रिम कार्य मे भी लेखन का कार्य सम्भालते रहेंगे।

मैं अब विज्ञ पाठकों से अनुरोध करता हूँ कि इस पुस्तक की त्रुटियां सम्भालकर पढ़ेंगे तथा अन्य को यह समझाने का प्रयत्न करेंगे कि श्रीराम पूर्ण ब्रह्म हैं न कि केवल एक राजा के पुत्र।

आपका

रघुवर दास

प्रस्तावना

गोस्वामी तुलसीदास जी सच्चे समाज सुधारक के रूप में जो समाज की सारी विषमताओं को समन्वयवादी सिद्धान्तों के माध्यम से दूर कर सामने आते दिखाई देते हैं। क्योकि जो मूलतः सन्त और भक्तकवि थे। इनकी महान कृति श्रीरामचरितमानस जो विश्वास स्वरूप भगवान शिव और श्रद्धास्वरूपा भगवती पार्वती का भक्तिरससासिक्त पवित्र सम्वाद है। शिवजी के मन से प्रवाहित श्रीरामचरितमानस की कथा सरिता जो **"नाना पुराणनिगमागमसम्मतं यद् रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।"** की सारभूत ज्ञान जलधारा से परिपूर्ण जगत् को अपने प्रवाह में सिंचित कर ऐहलौकिक और परलौकिक सुख प्रदान करती है। इस महान पवित्र कृति में गोस्वामीपाद स्वसुख के साथ परसुख की कल्पना की है। और अपने आराध्य श्रीराम जी को आदर्श मर्यादापुरूषोत्तम एवं उदात्त चरित्रनायक के साथ पूर्ण ब्रह्म माना है क्योंकि वे अपनी बात न कह कर यथाश्रुत विषयों का विवेचन किया है। अर्थात् अपने गुरूमुख से सुने वेदों, पुराणों, शास्त्रों आदि द्वारा निरूपित विषयों का वर्णन किया है। परन्तु सांसारिकता मे आबद्ध आज के लोगों में यह भ्रान्ति है कि श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म नहीं हैं। वे मर्यादापुरूषोत्तम, चरित्रवान, आर्दश राजा, मनुष्योचित गुणों से परिपूर्ण दशरथ पुत्र हैं। ठीक है अल्पज्ञ साधारण लोगों की बात ही क्या? इस प्रकार की भ्रान्ति आज की ही नहीं बल्कि पूर्व से ही राम जी के विषय में है कि ये पूर्ण ब्रह्म हैं या नहीं, जो दशरथ पुत्र हैं।

प्रयाग मे महामुनी भारद्वाज जी ब्रह्म तत्वज्ञ मुनीश्वर याज्ञवल्क्य जी से श्रीराम जी को पूर्ण ब्रह्म जानने के लिए प्रश्न किया कि–

रामकवन प्रभु पूछौ तोही। कहिअ बुझाइ कृपानिधि मोही।।

एक राम अवधेस कुमारा। तिन्हकर चरित विदित संसारा।।

नारि विरहुँ दुखुलहेउ अपारा। भयउ रोष रन रावनु मारा।।

प्रभु सोई राम कि अपर कोउ जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्यधाम सर्वग्य तुम्ह कहहु विवेक विचारि।।

इस प्रश्न के उत्तर में याज्ञवल्क्य जी श्रीराम कथा की महिमा का बखान कर श्री शिव–पार्वती संवाद को सुनाते हैं–

शिव–पार्वती संवाद–

श्री पार्वती जी का प्रश्न–

प्रभु जे मुनि परमारथवादी। कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी।।
रामु सो अवध नृपतिसुत सोई। की अज अगुन अलखगति कोई।।
जौं नृप तनय त बह्म किमि-?

श्री शिवजी का उत्तर–

राम बह्म व्यापक जग जाना। परमानन्द परेस पुराना।।
सब कर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।

इस प्रकार शिवजी ने श्री पार्वती जी के भ्रम को दूर कर दिया। इसी संवाद को प्रस्तुत करके याज्ञवल्क्य जी ने भारद्वाज जी को श्रीरामजी के ब्रह्म स्वरूप का बोध कराया। ऐसे ही श्रीराम जी के पूर्ण बह्म विषयक प्रश्नोत्तर कागभुसुण्डि–गरूड़ संवाद है। गरूड़ जी का प्रश्न है कि–

व्यापक ब्रह्म विरज बागीसा। माया मोह पार परमीसा।
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं। देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं।।
भव बंधन ते छूटहिं नर जपि जाकर नाम।
खर्ब निसाचर बांधेउ नागपास सोइ राम।।
नाना भाँतिमनहिं समुझावा। प्रगट न ग्यान हृदयँ भ्रम छावा।।

तब उत्तर में कागभुसुण्डि के द्वारा श्रीराम कथा और ब्रह्म तत्व युक्त वचनों को सुनकर गरूड़ जी ने कहा–

गयउ मोर सन्देह, सुनेऊँ सकल रघुपति चरित।
भयउ रामपद नेह तव प्रसाद बायरा तिलक।।

गोस्वामी तुलसी दास जी भी इसी प्रकरण को संतसमाज और कलिकाल के जीवों के सामने प्रस्तुत किया है। श्रीरामचरित मानस के सप्तसोपान (सातों काण्ड) में प्रायः सभी मुख्य पात्रों के माध्यम से गोस्वामी जी श्रीराम जी को पूर्ण ब्रह्म सिद्ध करवाते हैं। इसी विषय का प्रतिपादन श्रीरामचरित मानस के माध्यम से **"राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी"** नामक पुस्तक में किया गया है। यद्यपि **'राम अमित गुन सागर थाह कि पावइ कोइ।' 'समुझत अमित राम प्रभुताई' फिरभी 'सब जानत प्रभु प्रभुता सोई। तदपि कहे बिनु रहा न कोई।।'** के अनुसार भगवत्कृपा से ही कुछ लिखने का प्रयास किया गया है।

प्रार्थना

भए प्रगट कृपाला दीन दयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।
लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुज चारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी।।
कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुन ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता।।
करूना सुख सागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्री कंता।।
ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै।।
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै।।
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा।।
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरि पद पावहिं ते न परहिं भवकूपा।।
दोहाः- बिप्र धेनु सुर संत हित, लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।

विषयानुक्रमणिका

१. सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी
२. भक्त हित पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी का अवतार
३. सती द्वारा पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी की परीक्षा
४. निर्गुण–सगुण स्वरूप पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी
५. सप्त सोपान में एक दृष्टि पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी

"जय सच्चिदानन्द जग पावन"

त्रेतायुग में एक बार शिवजी अगस्त्यमुनि के पास गये। अगस्त्यजी के पास शिवजी अनेक बार आना–जाना किये थे, पर यह प्रसंग एक बार उस त्रेतायुग का है, जिसमें पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी का अवतार हुआ था और मनु जी दशरथ हुए थे। शिवजी के साथ सती जी भी थीं। राम कथा श्रवण करने के लिए शिवजी अगस्त्य ऋषि के पास गये। शिवजी जानते थे कि इस समय अगस्त्य मुनि के पास जाने से श्री रघुनाथ जी का दर्शन होगा और दर्शन से कल्याण होगा। शिवजी और अगस्त्य जी सत्संग के अत्यन्त प्रेमी हैं। इन्ही दो महापुरूषों ने श्रीराम जी से सत्संग की याचना की थी। यथा–

शिवजी– **बार-बार बर मागहुँ हरषि देहु श्रीरंग।**

पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग।।

अगस्त्य जी– **अबिरल भगति बिरति सतसंगा।**

चरन सरोरूह प्रीति अभंगा।।

अगस्त्य जी ने शिवजी एवं सती जी की पूजा–वन्दना करके रामकथा प्रारम्भ की। शिवजी पुलकित हो सुखपूर्वक रामकथा सुनी और कही। तत्पश्चात् शिवजी ने अगस्त्य जी को अधिकारी समझकर श्रीराम जी की भक्ति प्रदान की। कुछ दिन अगस्त्याश्रम पर वास करके शिवजी सती समेत अपने निवास स्थान कैलाश को चल पड़े, अगस्त्य जी से विदा लेकर, पुलकित होकर यह विचार करते चले जा रहे हैं कि कब मेरे स्वामी प्रभु श्रीराम जी का दर्शन होगा। हृदय में श्रीराम दर्शन की प्रबल लालसा है। नेत्र दर्शन करने को ललचा रहे हैं।

यहाँ शिवजी को ही श्रीराम जी के दर्शन की प्रबल इच्छा है, सती जी को नहीं। ऐसा क्यों? जब कोई बात सुनाई जाती हो, वहाँ पर आप बैठे हों लेकिन आपका मन उन बातों में नहीं लगा है तो उसे आप नहीं

समझ सकते हैं और न उन बातों पर विचार ही कर सकते हैं। ठीक यही स्थिति सती जी के विषय में है। अगस्त्य जी के पूजा एवं सत्कार करने से सती जी के मन में यह विचार आया कि जो हम लोगों की पूजा कर रहा है और उच्चासन देकर आदर सत्कार कर रहा है। वह हम लोगों से निम्न है और हम श्रेष्ठ हैं। यह क्या हम लोगों को कथामृत का पान कराएगा? जहाँ ऊँच–नीच की प्रवृत्ति आती है वहीं व्यक्ति के जीवन में कोई अघटित घटना घटती है। व्यक्ति को सामने वाले में स्थित गुणों पर विचार करना चाहिए, उसके जाति–अवस्था पर नहीं। आजकल के लोग तो श्रीरामकथा सुनने से बहुत कतराते हैं और कहते हैं कि क्या कथा सुननी है वही पुरानी कथा जिसे बार–बार साधु महात्मा और पंडित कहा करते हैं। लेकिन उन्हे पता नहीं है कि यह कथा जीवन को प्रशस्त एवं उज्ज्वल बनाने का सरल साधन है।

जाटों के किसी एक गाँव में कोई पंडित जी एक बार कथा कहने के लिए गये। पंडित जी ने सुव्यवस्थित स्थान देखकर गाँव के लोगों को बुलवा कर नौ दिन तक कथा कहने की योजना बनायी। जाटों ने नौ दिन तक कथा करने की सारी व्यवस्था कर दी। लेकिन कथा सुनने कोई नही आता था। पंडित जी ने कहा– तुम लोग कथा सुनने नहीं आते हो क्या बात है? जाटों ने कहा पंडित जी। आप तो कथा गलत कहेंगे ही नहीं। कथा तो सत्य होती है उसे क्या सुनना है। सत्य तो सत्य ही है उसे बार बार क्या सुनना है, बस आप कथा कहते जाइये। नौ दिन तक कथा का अनुष्ठान था इसलिए नवें दिन कथा पूर्ण हुई। पंडित जी अपने घर के लिए प्रस्थान किये। इधर जाटों में आपसी चर्चा हो रही थी कि उसी में से किसी ने पूछा–कहो भाई। राम राक्षस थे या रावण? जाटों ने कहा– अरे भाई! हम लोगों को तो पता ही नहीं है कि राम राक्षस थे या रावण। अच्छा, ठीक है अभी तो पंडित जी रास्ते में ही होंगे, चलकर पूछ ही लेते हैं। जाटों ने जाकर पंडित जी को बुलाया। पंडित जी बड़ी आशा के साथ रूके कि अब ये लोग कुछ दान–दक्षिणा मुझे देंगे। भगवान ने इनको सद्बुद्धि दे दी, भगवान

की बड़ी कृपा हुई चलकर देखूँ क्या देते है ये लोग। फिर क्या? जाटों ने कुछ दिया तो नहीं और पूछ पड़े– महाराज। यह तो बताते जाइये कि राम राक्षस थे या रावण? पंडित जी बोले–अरे। सुनो न राम राक्षस थे न रावण राक्षस। राक्षस तो मैं हूँ जो तुम लोगों को नव दिन तक कथा सुनाने का प्रयत्न किया।

महापुरूषों और सन्तों ने रामकथा का आश्रय लेने का उपदेश दिया है। क्योंकि रामायण गीतादि धार्मिक ग्रन्थों में भक्ति, ज्ञान, वैराग्य के साथ साथ पारिवारिक, राजनैतिक, सामाजिक ज्ञान एवं सारी समस्याओं का समाधान है। इन धार्मिक ग्रन्थों का मनन, पठन–पाठन न करने से जीवन में विशेष हानि होती है।

एक महात्मा को रेलगाड़ी से यात्रा करनी थी। गाड़ी विलम्ब थी। इस कारण महात्मा जी के साथ यात्रा करने वाले किसी एक सज्जन ने आकर पूछा कि महात्मा जी क्या कर रहे हैं। महात्मा जी बोले–मैं रामायण का पाठ कर रहा हूँ। तब वे सज्जन बोले– मैं तो रामायण को कई बार पढ़ा, मुझे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। इसके पढ़ने से कुछ लाभ नहीं होता है। महात्मा जी बोले–आपको भले ही लाभ न मिला हो, मुझे तो लाभ ही लाभ दिखता है। मेरे जीवन का आधार है, मार्गदर्शक है रामायण। इसी वार्ता के दौरान गाड़ी प्लेटफार्म पर आ गई। भीड़ काफी थी। महात्मा जी अकेले थे। गाड़ी पर चढ़ गये। वे सज्जन भी जल्दी–जल्दी करके गाड़ी पर चढ़े, तब तक गाड़ी चल पड़ी। लेकिन उनकी पत्नी नहीं चढ़ पायी, प्लेटफार्म पर ही छूट गयी। अब तो उन सज्जन को चैन ही न मिले। ठीक उसी डिब्बे में महात्मा जी भी थे। महात्मा जी बोले–श्रीमान जी, क्यों बेचैन हैं? किसी सीट पर शान्ति से बैठ जाइये। इतने पर वे सज्जन झुंझलाकर बोले–आप महात्मा हैं! अकेले हैं! आपको क्या है, मेरी पत्नी स्टेशन पर ही छूट गयी और मैं शान्ति से बैठूँ? महात्मा जी बोले–महाशय जी। आपने तो कहा कि मैं रामायण कई बार पढ़ी है। परन्तु आपने तो रामायण को केवल पढ़ा है।

अपने जीवन में उसका सही ढ़ंग से मूल्यांकन एवं मनन नहीं किया है। यदि आपने रामायण जी के पाठ के साथ साथ अपने जीवन में उससे शिक्षा ग्रहण किया होता तो आपकी पत्नी स्टेशन पर नहीं छूटती और आप अपनी भार्या के साथ होते। रामायण में अनेक जीवनोपयोगी शिक्षाप्रद बातें लिखी गई है यथा–

''राम सखा तब नाव मगाई। प्रिया चढ़ाई चढ़े रघुराई।।

अर्थात् जब राम सखा निषादराज ने नाव मँगवायी, तब श्रीराम जी ने पहले अपनी प्रियतमा सीता जी को नाव पर चढ़ाकर फिर अपने नाव पर चढ़े।

श्रीमान् जी! यदि इस विषय पर रामायण पाठ के समय ध्यान दिये होते तो पहले अपनी पत्नी को गाड़ी पर चढ़ाकर फिर गाड़ी पर चढ़ते। और शान्ति का अनुभव प्राप्त करते। यही लाभ है रामायण पाठ करने का। जिससे जीवन में सुख और शान्ति की प्राप्ति होती है। ध्यानपूर्वक रामकथा को सुनना और धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन मानव जीवन की सबसे बड़ी उर्पलब्धि है।

सती जी रामकथा को महत्त्व न देकर अगस्त्य जी को हेय दृष्टि से देखने लगीं कि यह एक ऋषि हैं जो मुझसे निम्न हैं। मैं जगदीश्वर शिव जी की शक्ति जगदीश्वरी हूँ श्रेष्ठ हूँ। सती जी रामकथा को प्राथमिकता न देकर रामकथावाचक को प्राथमिकता देने लगीं। अर्थात् अपने से निम्न मानने लगीं। परिणाम स्वरूप सती जी ने मन लगाकर कथा नहीं श्रवण कीं। सत्संग में बैठी थीं परन्तु सुख मानकर शिवजी के समान कथा नहीं सुनीं। अगस्त्य जी ने श्रीराम जन्म से लेकर सीताहरण तक की कथा कही। सुखपूर्वक भावविभोर होकर शिवजी कथा श्रवण किये। ठीक उसी समय पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी अवतार लेकर दण्डकारण्य में सीता जी की खोज कर रहे थे। अगस्त्य जी ने कथा में सुनाया कि इस समय श्रीराम जी दण्डकारण्य में विचर रहे हैं। तभी भगवान शिवजी के मन में प्रभु दर्शन की प्रबल इच्छा हुई कि मैं अभी

जाकर श्रीराम जी का दर्शन करूँगा। श्रीराम जी के दर्शनों के अवसर पर शिवजी कभी नहीं चूकते हैं। जन्म के समय, विवाह के समय, वन यात्रा में, समरांगण में, राज्याभिषेकादि के अवसरों पर दर्शन कर ही लेते हैं। मुनि अगस्त्य जी से आज्ञा लेकर सती जी के साथ चल पड़ते हैं। शिवजी को दर्शन की उत्कट इच्छा है, परन्तु सती जी को दर्शन की अभिलाषा नहीं है। क्योंकि कथा मन लगाकर नहीं सुनी है।

बिनु सतसंग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग।

मोह गए बिनु रामपद होइ न दृढ़ अनुराग।।

बिना सत्संग किये हरिकथा सुनने को नहीं मिलती, उसके बिना मोह की निवृत्ति नहीं होती और मोह गये बिना श्रीराम जी के चरणों में अनुराग दृढ़ नहीं होता है। भक्ति प्राप्त करने के लिए कथा बहुत ही अनिवार्य है। सन्तों ने कहा है–

कथा सुनत, मुर्दा जरत देखि विराग तुरन्त।

यही प्रीति जो बनी रहे तो मिल जाये भगवन्त।।

लोगों को कथा सुनकर और मूर्दा (शव) को जलते देखकर तुरन्त वैराग्य हो जाता है। संसार की सारी वस्तुएं तुच्छ लगने लगती है। विषयों से विराग होने लगता है। ईश्वर की भक्ति करने का विचार बनने लगता है। लेकिन ये सब भावनाएं केवल कथा सुनने और मूर्दा जलने तक ही सीमित रहती है। यदि यही भावना सदैव बनी रहे तो भगवान की प्राप्ति सहज में ही हो सकती है। नारद भक्ति सूत्र में कहा गया है–

"तदर्पिताखिला चारिता तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति"

अपने सारे कर्म–धर्म भगवान को समर्पण करने पर भी उनकी विस्मृति में परम व्याकुलता होनी चाहिए। सतत् उनकी याद होनी चाहिए। कभी भी ईश्वर को नहीं भूलना चाहिए। स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने कहा कि **"जिस प्रकार प्राणी भूख लगने पर छटपटाता है**

उसी प्रकार ईश्वर के लिए छटपटाये तो ईश्वर दर्शन अतिशीघ्र हो जायेगा।'' ईश्वर के लिए रोइये, छटपटाइये, दर्शन के लिए लालायित रहिये। आपको ईश्वर का दर्शन हो जायेगा, जीवन सफल हो जायेगा, आप निहाल (धन्य) हो जायेंगे।

शिवजी को प्रभु श्रीराम जी के दर्शन की प्रबल इच्छा है। दर्शन करने को नेत्र ललक रहे हैं, कब दर्शन होगा मेरे रामजी का। हृदय में खलबली मची है प्रभु दर्शन के लिए। परन्तु सती जी को न ये भाव ही जगे हैं और न शिवजी के इस रहस्य को समझ ही रही हैं। शिवजी को केवल राम दर्शन की ही प्रबल इच्छा है। बस, इतनी व्याकुलता होते ही अपने आराध्य प्रभु श्रीराम जी का दर्शन शिवजी नेत्र भरकर प्राप्त करते हैं और **''जय सच्चिदानन्द जग पावन''** कहकर प्रणाम करते हुए प्रसन्न हो जाते हैं, हृदय की व्यथा शान्त हो जाती है।

इस दशा को देखकर सती जी को भ्रम (सन्देह) उत्पन्न हो जाता है कि जो शिवजी जगतपूज्य, जगदीश्वर हैं, वे एक राजकुमार को सच्चिदानन्द जगपावन, परमधाम कहकर प्रणाम करते हैं। सच्चिदानन्द, जगपावन, परमधाम, व्यापक, विरज, अजन्मा, अकल, अनीह, अभेद, अगम्य, अगोचर, जिसे वेद **'नेति नेति'** कहते हैं, वह तो केवल पूर्ण ब्रह्म ही है। कैसे वह मानव शरीर धारण कर सकता है। वह सर्वज्ञ है, कैसे नारी विरह में दुःखी हो सकता है। इस प्रकार सती जी को विशेष सन्देह उत्पन्न हो गया। क्योंकि रामकथा मन लगाकर नहीं सुनी थी, जिसके कारण श्रीराम जी के स्वरूप का बोध नहीं है। अब सती को समझाते हुए शिवजी सच्चिदानन्द जगपावन कहकर रामजी को पूर्ण ब्रह्म होने का संकेत देते हैं। मनोज नसावन अर्थात् काम को भस्म करने वाले निष्कामी शिवजी लीलाक्षेत्र में विरही एवं कामी दिखने वाले रामजी को सच्चिदानन्द जगपावन कहते हैं। क्योंकि शिवजी को श्रीराम तत्व का पूर्ण ज्ञान है। और वे यह भी जानते हैं कि श्रीराम जी मनुष्य का अवतार लेकर लोकशिक्षणार्थ लीला कर रहे हैं। उनका अवतार

लोकशिक्षणार्थ होता है न कि रावणादि निशाचरों के वधार्थ। वे सीता जी से कभी अलग नहीं होते हैं। और न उन्हें वियोग जनित दुःख ही होता है। सीता जी उनकी नित्य सहचरी हैं। वे तो आत्माराम, पूर्णकाम पूर्णब्रह्म हैं। यथा–**"मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं रक्षावधायैव न केवलं विभोः। कुतोऽन्यथा स्याद......"** "महापुरूषों का चरित्र साधारण मनुष्यों के लिए शिक्षा है।" **"कामिन्ह कै दीनता दिखाई। धीरन्ह के मन विरति दृढ़ाई।।"** विरही के समान लीला करते हुए रामजी कामी पुरूषों की दीनता और धीर पुरूषों, भक्तों के मन में दृढ़ भक्ति का उपदेश देते हैं। रामजी के चरित्र को देखकर अज्ञानी, मूर्ख लोग मोहित हो जाते हैं और ज्ञानीजन, भक्त, विद्वान सुखी होते हैं। यथा–**"राम देखि सुनि चरित तुम्हारे। जड़ मोहहि बुध होहि सुखारे।।"** वास्तव में श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म हैं।

भगवान शिवजी कहते हैं–हे सती! श्रीराम जी सच्चिदानन्द, जगपावन, पूर्ण ब्रह्म हैं। उनके विषय में सन्देह नही करना चाहिए। ब्रह्म को निर्गुण अर्थात् दिव्य (सात्विक) और अदिव्य (राजस–तमस) सर्वगुणों से रहित केवल सच्चिदानन्द स्वरूप माना जाता है। सच्चिदानन्द गुण नहीं है ब्रह्म का स्वरूप है।

सत् कहिये जो विन से नाहीं। चित् चैतन्य सकल जग माहीं।।
सब दुःख वरजित रहहिं आनन्दा। ताको कहिये सच्चिदानन्दा।।

श्रीराम जी सत् चित् आनन्द स्वरूप है। **"रामो द्विर्नाविभाषते"** श्रीराम जी सत्य स्वरूप हैं कभी दो वाक्य नहीं बोलते हैं। अर्थात् असत्य भाषण नहीं करते हैं। **"रामः सत्यं परं ब्रह्म रामात् किंचिन्न विद्यते। तस्माद्रामस्वरूपोऽयं सत्यं सत्यमिदं जगत्।। (रामस्तवराज** ६४) श्रीराम जी ही सत्य पर ब्रह्म हैं। उनके बिना और कुछ नहीं है अतः यह जगत श्रीराम जी का ही स्वरूप है यह बात सत्य है। अथवा यह जगत सत्य है, सत्य है।

सच्चिदानन्द = सत् + चित् + आनन्द।

सत् = सत्ता गुण वाला। सत्ता = अस्तित्व, स्थित रहना।

सत्ता वह गुण है कि जिसके पास वह हो उसके विषय में "है" ऐसा कहा जाता है। जो भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों काल में बना रहता है। जिसका कभी नाश नहीं होता है, उसको **"सत्"** कहते हैं।

चित् = चैतन्य गुण वाला। चैतन्य = चेतना, ज्ञान। ज्ञान वह गुण है कि जिसके पास रहता है वह भला-बुरा आदि जानता है। इस गुण से युक्त उसे **"चेतन"** भी कहते हैं। अर्थात् भूत, वर्तमान और भविष्य इन तीनों कालों में जहाँ जो कुछ हो गया, हो रहा है, और होगा। उन सबको यथार्थ रूप से सदा जानते हैं तथा कोई भी विषय जिनको अज्ञात नहीं है। उनको **"चित्"** कहते हैं।

आनन्द = आनन्द गुण वाला। आनन्द = सुख। आनन्द वह गुण है जो तीनों काल (भूत, वर्तमान, भविष्य) में अपरिमित तथा अविनाशी आनन्द से परिपूर्ण है। और दुःख या दुःखद क्लेश जिनके पास कभी नहीं आते हैं। उसको **"आनन्द"** कहते हैं।

शिवजी श्रीराम जी को सच्चिदानन्द सम्बोधन करके पूर्ण ब्रह्म सिद्ध करते हैं। वेदों ने जिन्हे अव्यय पुरूष कहा है। उस ब्रह्म की पाँच कलाएँ (आनन्द, विज्ञान, मन, प्राण और वाक) है। उनमें आनन्द प्रसिद्ध है। विज्ञान चित् है। तथा मन, प्राण और वाक् की समष्टि ही सत् है। अर्थात् सत् चित् आनन्द की समष्टि ही **"सच्चिदानन्द"** है। ब्रह्म ज्ञाता वशिष्ठ जी भी राम जी को आनन्द का सागर कहते हैं। अर्थात् समुद्र हमेशा परिपूर्ण रहता है। राम जी हमेशा आनन्द से परिपूर्ण रहते हैं। यथा–

जो आनन्द सिन्धु सुखरासी। सीकर तें त्रैलोक सुपासी।।

सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक विश्रामा।।

जो आनन्द के समुद्र और सुख की राशि हैं, जिस (आनन्द सिन्धु) के एक कण से तीनों लोक सुखी होते हैं, उनका नाम **"राम"** है। जो

सुख का भवन और सम्पूर्ण लोकों को शान्ति प्रदान करने वाले हैं।

श्रीराम जी के उस मुखारविन्द की छवि से गोस्वामी तुलसीदास जी सुन्दर मंगल कामना करते हैं जो राज्याभिषेक की बात को सुनकर न तो प्रसन्नता को प्राप्त हुई और न वनवास के दुःख से मलीनता को जो श्रीराम जी सदैव प्रसन्न एवं आनन्दित रहने वाले हैं वे ही एक, इच्छारहित, रूपरहित, नामरहित, अजन्मा, सच्चिदानन्द, परमधाम, व्यापक, विश्वरूप, भगवान पूर्ण ब्रह्म हैं। जिन्होंने रूप धरकर सुन्दर नरलीला की। यथा–

''प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले बनवास दुःखतः।

मुखाम्बुज श्री रघुनन्दनस्य में सदास्तु सा मज्जुलमंगलप्रदा।।

एक अनीह अरूप अनामा। अज सच्चिदानन्द परधामा।।

व्यापक विश्वरूप भगवाना। तेहि धरि देह चरित कृत नाना।।

भगवान श्रीराम सहज आनन्द के निधान हैं। पिता की आज्ञा मानकर वन में जाने के लिए रामजी भूषण, वस्त्रों को त्यागकर वल्कल वस्त्र धारण कर हृदय मे विषाद (दुःख) और हर्ष से रहित हो तैयार हो गये। यथा–

पितु आयस भूषन बसन तात तजे रघुबीर।

बिसमउ हरषु न हृदय कछु पहिरे बलकल चीर।।

जो असत् पदार्थ रहित केवल सत् पदार्थ सर्वकाल एक रस, सदा एकरस चैतन्य, जिसकी चेतनता से जड़माया जगत मात्र चैतन्य है और सबका साक्षीभूत है। जो सबकी गति जानता है और जिसकी गति कोई नही जानता, सबको चैतन्य करता है और स्वयं केवल चैतन्य रूप है। तथा हर्ष–शोक रहित सदा एक रस अखण्ड आनन्द रूप है। वही पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द श्रीराम जी हैं। जिनका विग्रह चतुष्टय (नाम, रूप, लीला और धाम) सच्चिदानन्द स्वरूप है यथा–

रामस्य नाम रूपं च लीला धाम परात्परम्।

एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्द विग्रहम्।। (वशिष्ठ संहिता)

शिवजी कहते हैं कि सच्चिदानन्द जगपावन श्रीराम जी की जय हो। अर्थात् जगत को पवित्र करने के लिए प्रभु आप नर लीला करते हुए विचर रहे हैं। नहीं तो आप परधाम के निवासी हैं। यह जगत राक्षसों के उपद्रव से अपावन (भ्रष्ट) हो गया है। अतः उसके पवित्र करने के लिए आपने अवतार लिया है। जगपावन प्रभु राम जी की जय हो, जय हो। श्रीराम जी का विग्रह चतुष्टय (नाम, रूप, लीला और धाम) सच्चिदानन्द होने के साथ–साथ जगपावन भी है। यथा–

नाम = सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।।

रूप = मै नारि अपावन प्रभु जगपावन रावनरिपु जन सुखदाई।।

लीला (चरित) = जगपावनि कीरति विस्तरिहहिं।

गाई गाई भवनिधि नर तरिहहिं।।

धाम = वन्दौ अंवधपुरी अति पावनि। सरयू सरि कलि कलुष-नसावनि।।

श्रीराम जी को **"सच्चिदानन्द जगपावन"** कहकर शिवजी ने पूर्ण ब्रह्म सिद्ध कर दिया। क्योंकि अगस्त्याश्रम पर श्रीरामकथा में भगवान के अतिविचित्र चरित्र को समझ गये थे कि जगत को पवित्र करने के लिए लोकशिक्षार्थ ही सच्चिदानन्द ब्रह्म का अवतार हुआ है।

पूर्ण ब्रह्म श्रीराम का अवतार

"अवतरेउ अपने भगत हित निजतन्त्र नित रघुकुलमनी"

सती जी विचार कर रही हैं कि जिस राजकुमार राम को शिवजी सच्चिदानन्द परधाम कहकर प्रणाम किये हैं। क्या वह ब्रह्म हो सकते हैं? क्योंकि ब्रह्म जो व्यापाक, मायारहित, अजन्मा, अगोचर इच्छा रहित और भेद रहित है तथा जिसे वेद भी नहीं जानते हैं, वह देह धारण कर कैसे मनुष्य हो सकता है। यथा–

बह्म जो व्यापाक विरज अज अकल अनीह अभेद।
सो कि देह धरि होई नर जाहि न जानत बेद।।

यह भी मान लेती हूँ कि जो विष्णु भगवान देवताओं के हित के लिए मनुष्य शरीर धारण करते हैं, तो भी वे शिवजी की ही भाँति सर्वज्ञ हैं। फिर क्या वे ज्ञान के भण्डार, लक्ष्मीपति और असुरों के शत्रु भगवान विष्णु अज्ञानी की तरह स्त्री की खोज करेंगे। जो श्रीराम जी इस समय खोज रहे हैं। यथा–

बिष्नु जो सुरहित नर तनु धारी। सोइ सर्वज्ञ यथा त्रिपुरारी।
खोजई सो कि अग्य इव नारी। ग्यानधाम श्रीपति असुरारी।।

इस प्राकर सती जी विचार करती–करती अपार सन्देह के सागर में डूब गयीं। उनके सन्देहात्मक मन को शान्त करने के लिए हृदय में किसी भी प्रकार का समाधान नहीं हो सका। यथा–

अस संसय मन भयउ अपारा। होई न हृदयँ प्रबोध प्रचारा।।

सती जी को श्रीराम जी के पूर्ण ब्रह्म होने में जो सन्देह है, उसे दूर करने के लिए शिवजी कहते हैं–

मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत बिमल मन जेहि ध्यावहिं।
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहिं।।

सोई रामु व्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति माया धनी।

अवतरेउ अपने भगत हित निजतन्त्र नित रघुकुलमनी।।

विषयों को त्यागकर विमल मन से मुनि, धीर, योगी और सिद्धजन जिनका सतत ध्यान करते हैं, अर्थात् मुनि से ज्ञानमार्गी, धीर से उपासनामार्गी, जोगी से योगमार्गी और सिद्ध से कर्ममार्गी ये चारों के मन निर्मल होते हैं। विषय वासनाओं से रहित होते हैं, सदैव ही जिनका ध्यान धरते हैं वे ही पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी हैं।

अब सती का तर्क है कि व्यापक ब्रह्म अवतार नहीं लेता, उसी पर शिवजी कहते हैं कि–

कहि नेति–नेति। इतना ही नहीं, इतना ही नहीं, और भी है, और भी है ऐसा कहकर वेद जिनका निरन्तर गान करते हैं। वे ही राम जी साक्षात् व्यापक ब्रह्म हैं, साक्षात् ब्रह्म के अवतार हैं। समस्त बह्माण्डों के तथा समस्त ब्रह्माण्डों की रचयित्री जो माया है उसके भी स्वामी हैं। अर्थात् कारण और कार्य दोनों के स्वामी हैं। माया की प्रेरणा से इनका अवतार नहीं हुआ है, ब्रह्म राम जी तो माया के प्रेरक हैं। यथा–

माया ईश न आपु कहुं न जान कहिय सो जीव।

बंध मोक्ष प्रद सर्व पर माया प्रेरक सीव।।

ये राम जी स्वतन्त्र हैं अर्थात् काल, कर्म, गुण स्वभाव के वश में नहीं हैं। माया रचित जितने भुवन हैं उन सबों में जो व्यापक ब्रह्म हैं जिससे सारा चराचर चैतन्य है। जितने विष्णु महाविष्णु और नारायणादि सगुण रूप हैं, इन अगुण–सगुण दोनों रूपों के तथा समस्त भुवनों के, बह्मादि देवताओं के तथा माया के भी पति श्रीराम जी हैं। प्रभु राम जी सूर्यवत् हैं और व्यापक ब्रह्म उनका तेज है। विष्णु आदि यावत् रूप हैं वे राम जी के अंश कला है। यथा–

संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहि जासु अंस तें नाना।।

शिवजी कहते हैं कि हे सती! तुम जिन अगुण और सगुण रूपों का

महत्व मान बैठी हो, उनके भी पति रघुकुलमणि श्री राम का रूप है। यही हमारे इष्ट श्रीराम जी **'व्यापाक ब्रहम निकायपति माया धनी'** हैं, श्रीरामजी के प्रेरणा से माया के बनाये हुए जितने ब्रह्माण्ड हैं, उन ब्रह्माण्डों में अपने भक्तों का हित करने के लिए प्रभु राम जी अवतार लेते हैं। यथा–

श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीश माया जानकी।

जो सृजति जग पालति हरति रूख पाई कृपानिधान की।।

अवतरेउ अपने भगत हित– श्रीराम जी अपने निजी भक्तों (मनु–शतरूपा आदि) के हित के लिए अवतार लेते हैं। **'प्रभु सर्वज्ञ दास निज जानी। गति अनन्य तापस नृप रानी।'** अर्थात् प्रभु सर्वज्ञ हैं। अन्तर्यामी हैं, तपस्वी राजा–रानी (मनु–सतरूपा) की अनन्य गति देख उनको निज दास (अनन्य भक्त) जाना। तभी तो मनु जी की ब्रह्म भावना के अनुरूप पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी ने लीला करने के लिए शरीर धारण किया। यथा–

अगुन अखण्ड अनन्त अनादी। जेहि चिंतहि परमारथबादी।।

नेति नेति जेहि वेद निरूपा। निजानंद निरूपाधि अनूपा।।

संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहि जासु अंस ते नाना।।

ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई। भगत हेतु लीला तनु गहई।।

उपर्युक्त ब्रह्म के स्वरूप का चिन्तन करते हुए मनु–शतरूपा ने अपनी आराधना प्रारम्भ की तो प्रभु श्री सीताराम जी अपने भगत (मनु–शतरूपा) के हित के लिए उनके सामने प्रकट हुए। अर्थात् श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म के अवतार हैं, अतएव पूर्ण ब्रह्म हैं।

कुछ लोगों का कहना है कि बैकुण्ठनाथ विष्णु, क्षीरशायी विष्णु, नारायण का अवतार राम जी हैं। तो इसके उत्तर में मनु शतरूपा का प्रसंग स्पष्ट करता है कि ये श्रीराम जी के अंशावतार हैं, जो कि श्रीराम जी के अंश से उत्पन्न हुए है। यथा–

संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहि जासु अंस ते नाना।।

मनु–शतरूपा जी ब्रह्म सच्चिदानन्द का स्मरण करते हैं, वासुदेव भगवान के चरणारविन्द में प्रीति है। और हरि के लिए तप करते हैं। अर्थात् सच्चिदानन्द, वासुदेव और हरि एक ही ब्रह्म का स्वरूप है। यथा–

''सुमरहि ब्रह्म सच्चिदानन्दा'', '' बासुदेव पद पंकरूप दम्पति मन अति लाग'' और **'पुनि हरि हेतु करन तप लागे'**। ये तीनों नाम पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी के ही हैं। यथा–

'राम सच्चिदानन्द दिनेसा', बह्म सच्चिदानंद घन रघुनायक जहँ भूप', 'विस्ववास प्रगटे भगवाना' अर्थात् वासुदेव रूप में श्रीसीताराम जी प्रकट होते हैं। और **'अशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्', रामाख्यं जगदीश्वरं मायामनुष्यं हरिम्'**।

भगवत्स्मरण करते हुए हरि की प्राप्ति चाहते हैं, **हरति पापानि दुःखानि इति हरिः'** तप उपवास में जो दुःख है उसे हरण कर शीघ्र हरि का दर्शन प्राप्त हो। हृदय में अभिलाषा निरन्तर बनी है कि परम प्रभु को नेत्र भरकर देखूँ। यथा **'देखिय नयन परम प्रभु सोई'**। अतएव श्रीराम जी का दर्शन होता है जो श्रीराम जी सच्चिदानन्द, वासुदेव, हरि और परम प्रभु हैं।

कुछ लोगों को शंका होती है कि वासुदेव नाम श्रीकृष्ण का है। **'वसुदेवस्यापत्यं वासुदेवः** अर्थात् वसुदेव का पुत्र होने से श्री कृष्ण जी का नाम वासुदेव है। ठीक है वासुदेव का तात्पर्य श्रीकृष्ण होता है। लेकिन मनु जी ने कहा– कि **'जो सरूप बस शिव मन माहीं। जेहि कारन मुनि जतन कराहीं।। जो भुसंडि मन मानस हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा।। देखहि हम सो रूप भरि लोचन।।**

अर्थात् जो स्वरूप शिवजी और कागभुसुण्डि के मन में बसता है वही रूप का दर्शन मुझे चाहिए। तो शिवजी और कागभुसुण्डि के मन

में श्रीराम जी का ही स्वरूप बसता है न कि श्रीकृष्ण जी का। यहाँ पर श्रीकृष्ण जी का अनादर नहीं समझना चाहिए। शिवजी भगवान के सभी अवतारों का दर्शन करते हैं। कृष्ण जी की लीला का भी और रूप का भी शिवजी दर्शन करते रहते हैं। परन्तु यहाँ पर मन में जो रूप बसता है वह श्रीराम जी का ही है, क्योंकि श्रीराम जी ही शिवजी के और कागभुसुण्डि के इष्टदेव हैं। आराध्य हैं। यथा–

सोई मम इष्टदेव रघुवीरा। -शिववाक्य

इष्टदेव मम बालक रामा। - भुसुण्डिवाक्य

अतएव वासुदेव का अर्थ– '**वासे वासे तिष्ठति इति वासुदेवः** है। अर्थात् जो सर्वत्र वास करता है, सबमें रमता है वह वासुदेव श्रीराम जी हैं। क्योंकि '**रमते सर्वभूतेषु स्थावरेषु चरेषु च। सर्वात्म स्वरूपेण यश्च रामेति कथ्यते।।**' (आ० रा०)

'रमन्ते योगिनोऽनन्तो सत्यानन्दे चिदात्मनि।

इति राम पदेनासौ परब्रह्माभिधीयते।।

श्रीराम जी का सत् चित् आनन्द स्वरूप है, और सर्वात्म रूप से जड़–चेतन सबमें रमण करते हैं, अर्थात् वास करते हैं।

वासुदेव पुत्र होने से वासुदेव नाम श्रीकृष्ण का द्वापरयुग में सिद्ध होता है। मनु जी सत्ययुग में तप कर रहे हैं। उनके सामने श्री सीताराम जी प्रकट होते हैं।

अतएव वासुदेव नाम से श्रीकृष्ण का बोध करना उचित नहीं है। यह वासुदेव नाम भगवान के अनन्त नामों में से है जो सर्वव्यापकता को सिद्ध करता है।

अगुन अखण्ड अनंत अनादि। जेहि चिंतहि परमारथवादी।।
नेति नेति जेहि वेद निरूपा। निजानन्द निरूपाधि अनूपा।।
संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहि जासु अंस ते नाना।।

ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई। भगत हेतु लीला तनु गहई।।

प्रकृति पार होने से अगुन, निरवयव होने से अखण्ड, नाश रहित होने से अनन्त और अजन्मा होने से अनादि हैं, जिसका ब्रह्मवेत्ता चिन्तन करते रहते हैं। वेद भी जिसे नेति नेति कहकर निरूपण करते हैं। जिसके अंश से शिव, ब्रह्मा और विष्णु उत्पन्न होते हैं। ऐसे प्रभु श्रीराम जी सेवक के वश होकर भक्तहित करने के लिए लीला शरीर धारण करते हैं और अपने अंशो सहित शरीर धारण कर भक्तों को सुख देने के लिए सुन्दर चरित्र करते रहते हैं। यथा–

अंसन्ह सहित देह धरि ताता। करिहौं चरित भगत सुख दाता।।

मनु जी कहते हैं कि जिनके अंश (भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न) से शिव, ब्रह्मा और विष्णु उत्पन्न होते हैं। अर्थात् अंश से **'अंश इव अंश'** ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि उसे अखण्ड (निरंश) कहा गया है। जैसे प्रतिबिम्ब बिम्ब का **'अंश इव अंश'** है उसी प्रकार त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु और शिव) उसके प्रतिबिम्ब अर्थात् भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न से उत्पन्न होते हैं। – (मानसपियूष से)

इतने बड़े सामर्थ्य वाले (ऐश्वर्य वाले) प्रभु अपने भक्तों के लिए लीला शरीर धारण करते हैं। क्योंकि यह वचन श्रुति ने सत्य कहा है तो हमारी अभिलाषा पूरी करेंगे।

मनु जी की कठिन अखण्ड तपस्या को देखकर तप के फलदाता त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) मनु के पास बहुत बार आये और वर याचना का प्रलोभन भी दिया। लेकिन वर के लोभ में मनुजी नहीं आये। प्रभु श्रीराम जी अपने भक्त की अनन्य भक्ति देखकर वर माँगने की आकाशवाणी की। तब मनुजी ने कहा–

सुनु सेवक सुरतरु सुरधेनू। बिधि हरि हर वंदित पदरेनू।।
सेवत सुलभ सकल सुखदायक। प्रनतपाल सचराचर नायक।।
जौं अनाथ हित हम पर नेहू। तौ प्रसन्न होई यह बर देहू।।

जो सरूप बस शिव मन माहीं। जेहिं कारन मुनि जतन कराहीं।।
जो भुसुंडि मन मानस हंसा। सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा।।
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन। कृपा करहुँ प्रनतारति मोचन।।

"हे सेवकों के लिए कल्पवृक्ष एवं सुरधेनू स्वरूप प्रभो! सुनिये, आपके चरणों की वन्दना ब्रह्मा, विष्णु और महेश करते रहते हैं। आप सेवा करने से सुलभ हैं तथा सबको सुखदायक हैं। आप शरणागत रक्षक, चराचरनायक है। हे अनाथों के कल्याणकर्ता। यदि मुझ पर प्रसन्न हैं तो आप यह वर दीजिए कि जो स्वरूप शिवजी के मन में बसता है जिसके लिए मुनिजन यत्न करते हैं। जो कागभुसुण्डि के मन रूपी मानसरोवर में विहार करने वाला हंस है, सगुन और निर्गुण कहकर वेद जिसकी प्रशंसा करते हैं। हे शरणागत दुःखभंजन प्रभो! ऐसी कृपा करिये कि हम उसी रूप को नेत्र भरकर देखें।

शिवजी के मन में श्रीराम जी के बाल रूप का वास होता है–"**वन्दौ बाल रूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू।। मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।**" ऐसे रामजी के बाल रूप को जो शिवजी के मन में बसता है मनुजी चाहते हैं। और कागभुसुण्डि के मन रूपी मानसरोवर में श्रीराम जी का बालरूप ही हंस है। भुसुण्डि जी कहते हैं–"**इष्टदेव मम बालक रामा। सोभा बपुष कोटि सत कामा।।**" मनु जी शिवजी एवं कागभुसुण्डि के मन में बसने वाले परमप्रभु श्रीराम जी के बालक रूप का संकेत देकर श्रीराम जी को पुत्र के रूप में प्राप्त करना चाहिते हैं। इसलिए मनु जी ऐसा संकेत देकर परमप्रभु से "**चाहउँ तुम्हहि समान सुत प्रभु सन कवन दुराउ।।**" का वरदान माँगते हैं।

बस फिर क्या, कृपानिधान श्रीराम जी कृपा करके विश्व के कण–कण में वास करने वाले, सदैव सर्वत्र विद्यमान रहने वाले मनु जी के सामने प्रकट हो गये। यथा– "**भगतबछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।।**"

मनु जी के सामने श्रीराम जी आदिशक्ति सीता जी के साथ प्रकट हो गये और पुनः मनु के वर माँगने पर अयोध्या जी में बालक रूप में प्रकट होने का वरदान दिये कि जब आप दोनों (मनु–सतूपा) अवधपति दशरथ एवं कौशल्या के रूप में होंगे, तब मैं अपने अंशो (भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न) सहित प्रकट होऊँगा।

मनु शतरूपा के इस प्रसंग से यह ज्ञात होता है कि जो लोग श्रीराम जी को बैकुण्ठनाथ, क्षीरशायी और नारायण का अवतार मानते हैं तो ऐसी बात नही है। क्योंकि ये राम जी के अंश हैं। इसके विषय में वेदान्त भूषण जी का मत **''नारद पञ्चरात्र''** के माध्यम से मानसपियूष में है यथा– **बैकुण्ठेशस्तु भरतः क्षीराब्धीशस्तु लक्ष्मणः। शत्रुघ्नश्च स्वयंभूमा राम सेवार्थ मागताः।।**

अर्थात् भरत रूप से क्षीरशायी, श्री मन्नारायण का लक्ष्मण रूप से तथा भूमापुरूष का शत्रुघ्न रूप से राम सेवार्थ अवतार हुआ है।

बैकुण्ठाधीश श्रीनारायण श्रीराम जी के अंश हैं यथा–**''नारायणोऽपि रामांशः शंखचंक्रगदाधरः।''** **(वाराह पुराण)**। शेषशायी श्रीमन्नारायण को परात्पर ब्रहम का षोडशकलायुक्त विराट पुरूष कहा गया है। यथा–**''जगृहे पौरूषं रूपं भगवान् महदादिभिः। सम्भूतं षोडशकलमादौ लोकसिसृक्षया।। . . . पश्यन्त्यहो रूपमदभ्रचक्षुषा सहस्रपादोरू भुजाननादभुतम्।। भागवत १/३/४** अष्टभुजी भौमापुरूष भी श्रीराम जी के अंश है। **''तस्मिन साकेत लोके विधिहर हरिभि सततं सेव्यमाने दिव्ये सिंहासने स्वे जनकतनयया राघवः शोभमाने। (वृहत बह्म संहिता)** यहाँ मनु के कथन **''बिधि हरि हर वंदित पद रेनू''** की पुष्टि होती है। (मानसपियूष से) लंका विजयोपरान्त राज्याभिषेक के समय ब्रह्मा जी और शिवजी रामजी की स्तुति करने आये। लेकिन विष्णु जी का आना नहीं हुआ। कारण कि वहाँ पर स्वंय विष्णु, नारायण और भौमापुरूष के रूप में भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न जी विराजमान थे।

मनु–शतरूपा को ''**उर अभिलाष निरन्तर होई। देखिय नयन**

परम प्रभु सोई।। की ईच्छा थी। अतएव **'अवतरेउ अपने भगतहित'** श्रीराम जी ही परम प्रभु अर्थात् प्रभुओं के प्रभु प्रकट हुए। यथा–

ईसन के ईस, महाराजन के महाराज,
देवन के देव, देव! प्रानहु के प्रान हौ।
कालहू के काल, महाभूतन के महाभूत,
कर्महू के करम, निदान के निदान हौ।।
निगम को अगम, सुगम तुलसीहू-सेको,
एते मान सीलसिन्धु, करूनानिधान हौ।।
महिमा अपार, काहू बोल को न वारापार,
बड़ी साहबी में नाथ! बड़े सावधान हौ।। (कविता ७/१२६)

''**जो स्वरूप बस शिव मन माहीं**'' ऐसा कहकर मनु जी शिवजी के उस वचन को पुष्ट करते हैं जो शिवजी सती जी से कहते हैं कि ''**सोई मम इष्टदेव रघुबीरा**'' अर्थात् श्रीराम जी ही मेरे इष्टदेव हैं जो अगुन अखण्ड, अनन्त अनादि पूर्ण ब्रह्म हैं।

पूर्ण ब्रह्म श्रीराम की परीक्षा

''जौ तुम्हरे मन अति संदेहू। तौ किन जाइ परीक्षा लेहू।''

भगवान शिव सती जी से कहते हैं कि जो इस समय दण्डकारण्य में विचर रहे हैं, वे हमारे इष्टदेव प्रभु श्रीराम जी हैं। इनके विषय में ऐसा सन्देह मत करो कि ये पूरणब्रह्म नहीं हैं। इस समय प्रभु लोकलीला कर रहे हैं। संशय करने में हानि होगी **''संशयात्मा विनश्यति''** **(गीता)**। परन्तु सती जी के हृदय में सन्देह घर कर बैठा था। त्रिभुवन गुरू और विश्वासरूप शिवजी के कहने पर भी सतीजी का मोह (सन्देह) नहीं गया।

भगवान शिव त्रिभुवन गुरू हैं ऐसा वेदों ने गाया है। यथा– **''तुम्ह त्रिभुवन गुरू वेद बखाना''** अर्थात् तीनों लोकों के गुरू भगवान शिव के वचनों पर सती जी का विश्वास नहीं है। गुरू के वाक्यों पर विश्वास न करने से विशेष हानि होती है। गुरूजनों (महापुरूषों) के उपदेश (वचन) बिना विचारे ही शुभकारक होते हैं। यद्यपि भगवान शिव साक्षात् विश्वास की मूर्ति ही हैं, यथा– **''भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ''** फिर भी सती जी को शिवजी के समझाने पर विश्वास नहीं होता हैं। क्योंकि **'नारि सहज जड़ अग्य''** को चरितार्थ कर रही हैं।

शिवजी कहते हैं कि सती! तुम्हारे मन में अत्यन्त सन्देह है। तुम स्वयं जा कर परीक्षा ले लो, ताकि तुम्हारा सन्देह दूर हो जाये। यथा–

जौ तुम्हरे मन अति सन्देहू। तौ किन जाइ परीक्षा लेहू।।

परीक्षाकाल में विवेकपूर्वक विचार करना जिससे तुम्हारे भ्रम की निवृत्ति सही ढंग से हो। विवेकपूर्वक विचार अर्थात् विवेक से काम न करने पर पछतावा होता है, हानि होती है **''बिना विचारे जो करे सो पाछे पछिताय''**। शिव जी आज्ञा इसलिए देते हैं कि बिना जाने–पहचाने विश्वास नहीं होता है और बिना विश्वास के प्रीति नहीं होती है यथा–

"जाने बिनु न होई परतीती। बिनु परतीती होइ नही प्रीती।।" ये स्वयं जाकर परीक्षा कर लें। अब इनका कल्याण नहीं है क्योंकि मेरे कहने पर भी इन्हें प्रबोध नहीं हो रहा है।

शिवजी की आज्ञा पाकर सती जी श्रीराम जी की परीक्षा करने के लिए जाती हैं। बारम्बार हृदय में सोच–विचार कर श्री सीता जी का रूप धारण करती हैं और उस मार्ग में आगे होकर चली, जिस रास्ते से राजकुमार श्रीरामचन्द्र जी आ रहे थे।

सती जी श्रीसीता जी का रूप धारण कर इसलिए चली कि ये ब्रह्म होंगे तो समझ जायेंगे कि सीता का बनावटी वेष है। क्योंकि ब्रह्म सर्वज्ञ होता है। यदि मनुष्य होंगे तो अपनी भार्या (प्रिया) समझकर पत्नी वियोग में मुझे पकड़ने की कोशिश करेंगे, तब मैं अन्तर्धान हो जाऊँगी। इस कारण से इनके ब्रह्म होने का पता चल जायेगा। अतएव सामने से होकर चली आ रही थी। यथा–

पुनि पुनि हृदयँ विचारु करि धरि सीता कर रूप।

आगें होइ चलि पंथ तेहि जेहि आवत नरभूप।।

सती के कपट (कृत्रिम सीतावेष) को श्रीराम जी समझ गये। सती जी का कपट जानना साधारण देवता और मनुष्य की बात नहीं है। क्योंकि सती साधारण देवी नहीं हैं। भगवान शिव की आद्याशक्ति हैं, महामाया हैं। माया के कपट को मायापति ही जान सकते हैं। श्रीराम दोनों मायाओं (विद्या और अविद्या) के स्वामी हैं। महामायापति हैं। भगवान हैं। सर्वज्ञ हैं। यथा–

"वेत्ति विधामविद्याञ्च स वाच्यो भगवानिति।"

सती कपटु जानेउ सुरस्वामी। सबदरसी सब अंतरजामी।।

सुमिरत जाहि मिटइ अग्याना। सोई सर्वज्ञ राम भगवाना।।

सुरस्वामी, सर्वदर्शी, सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, भगवान और जिनके नाम–स्मरण मात्र से अज्ञान का नाश होता है, ऐसे श्रीराम जी हैं। जैसा

कि श्रुतिभगवती पूर्ण ब्रह्म के विषय में कहती हैं, यथा– **''स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता तमाहुरग्र्यं पुरुषं महान्तम्।'' (श्वे० श्व० उप० ३/१६)** अर्थात् यह सम्पूर्ण वेद्यवर्ग का ज्ञाता है किन्तु उसे कोई नहीं जानता है। उसे सबका आदि, पूर्ण एवं महान कहा गया है यथा–**''पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।''** उपर्युक्त सम्बोधन में श्रीराम जी को पूर्णब्रह्मत्व होने का संकेत किया गया है। अतएव श्रीराम जी सती के कपट को जान गये।

स्त्रीस्वभाव वश सती जी वहाँ अर्थात् श्रीराम जी के सामने भी छिपाव करना चाहती हैं तभी अपनी अघटित घटनापटीयसी माया के बल की सराहना कर हँसते हुए श्रीराम जी मधुर वाणी में पिताजी के नाम सहित स्वनाम लेते हुए हाथ जोड़ कर प्रणाम किये। सती भगवान शिव की शक्ति हैं, कपट वेष में सीता भाव न रखकर व्यवहार जगत में शिवशक्ति सती जी को रामजी प्रणाम करते हैं। पिता समेत नाम लेकर प्रणाम करने में सती के मन मे नृपतनय होने का जो भाव है, उसे दर्शाते हैं। पुनः अपना सर्वज्ञ ब्रह्म स्वरूप दर्शाते हुए पूछते हैं कि वृषकेतु शिवजी कहाँ हैं? जो कि आप अकेली बन में घूम रही हैं। क्योंकि सती को ब्रह्म होने में जो सन्देह था। यहाँ पर श्रीराम जी व्यंग भी करते हैं कि अकेले वन में घूमना स्त्री के लिए विनाशकारक है।

........स्त्री भ्रमन्ती विनश्यति।'' हम दोनों (राम–लक्ष्मण) के रहते भी सीता का हरण हो गया। आप तो अकेली घूम रही हैं, फिर आपका क्या होगा? आपका शिवजी के रहित अकेले वन में फिरना सोचनीय है, अनुचित है। श्रीराम जी के रहस्यमय वचनों को सुनकर सती जी को अत्यन्त संकोच हुआ। वे डरती हुई शिवजी के पास दुःखी होकर चली जा रही हैं, हृदय में भयंकर संताप हो रहा है। मैंने विश्वास की मूर्ति एवं कल्याणकर्ता भगवान शिव के वचनों पर विश्वास नहीं किया, अब मेरा कल्याण नहीं होगा। उन्हें जाकर क्या उत्तर दूँगी। इस प्रकार सती

जी पश्चाताप करने लगी। सती जी के इस दुःख को जानकर श्रीराम जी अपना प्रभाव अर्थात् पूर्ण ब्रह्मत्व प्रकट दिखाये। यथा–

जाना राम सतीं दुःख पावा। निज प्रभाव कछु प्रगटि जनावा।।

सती जी को यह सन्देह था कि निर्गुण ब्रह्म जो "**व्यापक विरज अज अकल अनीह अभेद**" है वह नरदेह धारण नहीं करता। दूसरे यह कि विष्णु भगवान सगुण ब्रह्म हैं तो वे नरदेह धारण करते हैं, सो सर्वज्ञ, ज्ञानधाम, श्रीपति हैं, लक्ष्मी जी का उनसे कभी वियोग होता ही नहीं और न निशाचर उनको चुरा ही सकते हैं। सीता रूप धरकर राम समीप आने पर रामजी ने उनको विधिवत् प्रणाम किया और " **कहेउ बहोरि कहाँ वृषकेतू। बिपिन अकेली फिरहु केहि हेतू।।**" श्रीराम जी के इन गूढ़ वचनों से सती जी को यह बोध हो गया कि ये सर्वज्ञ हैं, सर्वदर्शी हैं, अर्न्तयामी हैं। परन्तु इससे यह निश्चय नहीं होता है कि ये ब्रह्म हैं। जो अज, अनीह, अकल, विरज, अभेद और व्यापक हैं। क्योंकि विष्णु भगवान भी तो सर्वज्ञ हैं और अनेक योगी तथा सिद्ध भी इतना योगदृष्टि से हाल जान लेते हैं। श्रीराम जी स्वतः ही उनका कपट जान गये। इससे वे अनुमान कर सकती हैं कि ये ब्रह्म हैं विष्णु नहीं, परन्तु निश्चय नहीं कर सकीं क्योंकि वे क्या जानें कि ये स्वतः जान गये। पहचान भर कर लेना उनके संशय निर्मूल करने को पर्याप्त नहीं था। श्री रघुनाथ जी ने जब देखा कि ये बहुत दुःखी हैं तब इन पर दया आ गयी। वे सोचे कि इनका यह भ्रम मिटा देना और पतिवचन "**सच्चिदानन्द जगपावन**", "**सच्चिदानन्द परधामा**", "**सोई मम इष्टदेव रघुवीरा**"। इत्यादि में विश्वास करा देना इस समय उचित है। नहीं तो इनका त्याग सदैव के लिए हो जायेगा। हमारे सामने आने पर प्रबोध नहीं हुआ तो फिर कभी न हो सकेगा। प्रभु का प्रभाव बिना उनके जनाये कौन जान सकता है–"**सोइ जानइ जेहि देहु जनाई।**" अतएव अपना प्रभाव कुछ प्रकट जनाया (दिखाया) (मानसपियूष से)।

सतीं दीख कौतुक मग जाता। आगें राम सहित श्री भ्राता।।

फिरिचितवा पांछे प्रभु देखा। सहित्त बंधु सिय सुन्दर वेषा।।
जहँ चितवहि तहँ प्रभु आसीना। सेवहिं सिद्ध मुनीश प्रवीना।।
देखे सिव बिधि बिष्नु अनेका। अमित प्रभाउ एक ते एका।।
बंदत चरन करत प्रभु सेवा। बिबिध बेष देखे सब देवा।।
सती विधात्री इंदिरा देखी अमित अनूप।
जेहि जेहि बेष अजादि सुर तेहि तेहि तन अनुरूप।।
देखे जहँ तहँ रघुपति जेते। सक्तिन्ह सहित सकल सुर तेते।।
जीव चराचर जो संसारा। देखे सकल अनेक प्रकारा।।
पूजहिं प्रभुहिं देव बहु वेषा। राम रूप दूसर नहिं देखा।।
अवलोके रघुपति बहुतेरे। सीता सहित न बेष घनेरे।।
सोई रघुवर सोई लछिमन सीता। देखि सती अति भई सभीता।।

सती जी रास्ते में जाते समय कौतुक (आश्चर्य) से देखीं कि श्रीराम जी सीता लक्ष्मण समेत मेरे आगे दिखाई दे रहे हैं। पुनः पीछे की तरफ देखती हैं तो सुन्दर वेष में लक्ष्मण और सीता समेत श्रीराम जी का दर्शन हो रहा है। चकित होकर देख रहीं हैं कि अभी तो दोनों भाइयों का दर्शन किया, अभी फिर इतनी जल्दी सीता कहाँ से मिल गयी कि सीता सहित दोनों भाई दिखाई दे रहे हैं अब सती जी अगल–बगल अर्थात् जहाँ भी देखती हैं तो सर्वत्र श्रीराम जी का ही दर्शन हो रहा है। सब जगह प्रभु सिंहासनासीन हैं। शिवजी के वाक्य –"**सोई राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकायपतिमाया धनी**" को चरितार्थ कर रहे हैं। और सुचतुर सिद्ध मुनीश्वर सेवा कर रहे हैं, पुनः शिवजी के उस वाक्य को सिद्ध कर रहे हैं कि "**मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत विमल मन जेहि ध्यावाहिं।।**" एक से एक अमित प्रभाव वाले अनेक शिव, ब्रह्मा और विष्णु देखीं जो प्रभु के चरणों की वन्दना और सेवा कर रहे हैं। सब देवताओं को भाँति–भाँति के अनेक वेष धारण किये हुए देखीं। सती जी

का कहना है कि ब्रह्म का अवतार नहीं होता है तो शिवजी ने कहा कि "सोई रामव्यापक ब्रह्म" ही अपने भक्तहित अवतार लेते हैं। पुनः सती का तर्क है कि **"विष्णु जो सुरहित नर तनुधारी"** सुरहित विष्णु भगवान अवतार लेकर मनुष्य शरीर धारण करते हैं। इसी कारण राम जी ने अपना प्रभाव दिखाया कि विष्णु हमारे चरण सेवक हैं, ये हमारे अंश से उत्पन्न होते हैं **"संभु विरंचि विष्नु भगवाना। उपजहि जासु अंस ते नाना।।"** शिवजी को प्रथम सेवा में संबोधित करके श्रीराम जी कहते हैं कि हमारे चरणसेवकों में शिवजी अग्रगण्य हैं। जिन्हे आप विष्णु से श्रेष्ठ मानती हैं।

शिव ब्रह्मा और विष्णु अपनी शक्तियों (सती, विधात्री और इंदिरा) सहित अमित रूप में दिखाई दिये। अनेक प्रकार के ये त्रिदेव शक्ति शक्तिमान सहित अनुरूप दिखे। स्वयं सती शिवजी के साथ अनेक रूपों में दिखाई दीं। सारे देवता अपनी शक्तियों सहित श्रीराम जी की सेवा कर रहे हैं। अनेक वेषों में देवता श्रीराम जी की सेवा करते पाये गये। लेकिन श्रीराम जी का वही (राजकुमार दशरथनन्दन) रूप दिखाई दिया। संसार के जितने जड़-चेतन प्राणी हैं सभी अनेक प्रकार के दृश्य हुए लेकिन श्रीराम जी लक्ष्मण और सीता सहित वही दिखाई दिये, जो वनवास काल के दण्डकारण्य में विचर रहे थे। श्रीराम जी अपने इस स्वरूप को दिखाकर शिवजी के कथन–**"सोई राम व्यापक ब्रह्म-"** को चरितार्थ किये। अर्थात् अपनी सर्वव्यापकता सिद्ध की, जो सती के अनुसार ब्रह्म की व्यापकता है–यथा– **"ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज ....।"**

इस प्रकार के कौतुक को देखकर सती जी को अत्यन्त डर लगा। यह दृश्य अत्यन्त आश्चर्यमय विषमता से पूर्ण था, उनके हृदय में बहुत डर के कारण कम्पन होने लगा हृदय धड़कने लगा, शरीर की सुधी नहीं रही, आँखे मूँदकर रास्ते में बैठ गयीं। अब अद्‌भुत दृश्य का दर्शन करना कठिन हो गया था। वह दृश्य देखा नहीं जाता। अतएव आँखे

मूँदकर बैठ गयी। जब कोई बहुत डर जाता है तब उसकी आँखे मुँद जाती हैं क्योंकि वह दृश्य देखते नहीं बनता है। जब नेत्र बन्द हो जाता है तब डर का भय समाप्त हो जाता है।

सती जी की दृष्टि जहाँ तक पड़ती है वहीं ऊपर–नीचे, आगे–पीछे समस्त दिशा–विदिशाओं में सर्वत्र श्रीराम जी सेवकों सहित बैठे दिखाई देते, कहीं भी तिल मात्र चलने की जगह नहीं रह गयी थी। तब कहाँ जाये, कैसे आगे बढ़ें, चलें तो कैसे चलें? अतएव आँखे मूँदकर बैठ गयीं।

फिर आँखे खोलकर देखती हैं तो कुछ भी नहीं दिखाई देता है। वह आश्चर्यमय दृश्य समाप्त हो गया। तब सती को श्रीराम जी की सर्वव्यापकता का ज्ञान हो गया और उन्हे पूर्ण ब्रह्म मानकर बार–बार प्रणाम कर श्रीराम जी के चरणों में शीश नवाकर शिवजी के पास गयीं। यथा–

पुनि पुनि नाइ रामपद सीसा। चलीं तहाँ जहँ रहे गिरीसा।।

सती जी बार–बार प्रणाम करके अपनी दीनता और गलती को सूचित करती हैं। परीक्षा करने जब चली थीं तब श्रीराम जी को एक राजकुमार समझी थीं, लेकिन परीक्षोपरान्त उनके प्रभाव से प्रभावित होकर पूर्ण ब्रह्म मानकर बार–बार प्रणाम कर रही हैं। अर्जुन भी श्रीकृष्ण जी के विराट रूप का दर्शन करने के बाद स्तुति करते हुए बार–बार प्रणाम करके क्षमा माँगे थे। यथा–

त्वमादिदेवः पुरूषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते।

.... तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ।। गीता ११/३८-४२

सती जी श्रीराम जी की प्रभुता को देखकर बार–बार प्रणाम करके शिवजी के पास पहुँची। शिवजी ने कुशल समाचार पूछा तो सती ने

स्त्री स्वभाव वश कपट करके झूठ बोलीं। शंकर जी ध्यान करके सती के कपट को जान गये कि इन्होंने मेरी आराध्या श्रीसीता जी का रूप बनाकर परीक्षा ली है। इससे शिवजी को विशेष दु:ख हुआ। यथा–

सतीं कीन्ह सीता कर वेषा। सिव उर भयउ बिषाद बिसेषा।।

शिवजी दु:खी होकर सती से प्रेम करें या नहीं, इस विषय में किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये। उसी समय श्रीराम जी के चरणारविन्द में प्रणाम कर उनको याद करते हैं। अर्थात् प्रभु श्रीराम जी का स्मरण करके कहते हैं कि हे मेरे स्वामी! मैं आपका सेवक हूँ, धर्मसंकट में हूँ, कुछ समझ में नहीं आता है कि मैं क्या करूँ? आप सबके हृदय में वास करते हैं, सबके उर प्रेरक हैं **"उर प्रेरक रघुवंश विभूषन"**। इस समय मेरा क्या कर्तव्य है? वही प्रेरणा मेरे हृदय में दीजिए। श्रीराम जी के स्मरण से शिवजी के हृदय में ऐसी प्रेरणा हुई कि इस शरीर से सती का सम्बन्ध उचित नहीं है। अर्थात् सती से प्रेम करना अनुचित है। यथा–

तब संकर प्रभुपद सिरुनावा। सुमिरत राम हृदय अस आवा।।

एहितन सतिहि भेट मोहिं नाहीं। सिव संकल्प कीन्ह मन माहीं।।

इस प्रसंग से यह शिक्षा प्राप्त होती है कि जब हमारे ऊपर विपत्ति आ पड़े, और उस समय कोई उपाय ही न सूझे कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। तब उस स्थिति में भगवान की शरण में जाना चाहिए। अर्थात् ईश्वर चिन्तन करना चाहिए, भगवान से प्रार्थना करनी चाहिए। भगवत् स्मरण से और भगवत्कृपा से हृदय में युक्ति सूझ ही जायेगी। हमें विपत्ति से छुटकारा मिल जायेगा, हमारा जीवनमार्ग प्रशस्त हो जायेगा और हमें आनन्द की अनुभूति होने लगेगी। सती त्याग का विचार कर शिवजी कैलाश पहुँचते हैं और अपना सहज स्वरूप संभालकर अखण्ड अपार समाधि लगा ली। यथा–

संकर सहज सरूपु सम्हारा। लागि समाधि अखण्ड अपारा।।

सती कैलाश पर अकेले रह रही हैं। हृदय में बहुत दुःख है, अपने कृत्यों पर पश्चाताप कर रही हैं कि मैंने श्रीराम जी का अपमान किया है और पतिवचन (शिववाक्य) को झूठा माना है।

कृत्वा पापं हि सन्तप्य तस्मात्पापात् प्रमुच्यते।
नैव कुर्यात् पुनरिति निर्वृत्या पूयते तु सः।।

यदि कोई गलती या पाप हो जाये तो सच्चे हृदय से अपनी करनी पर पश्चाताप करना चाहिए। ऐसा करने से उस पाप से छुट्टी मिल जाती है। पुनः मुझसे ऐसा पाप नहीं होगा "यदि इस प्रकार का संकल्प करें तो उस पाप से छूट कर हृदय पावन हो जाता है। सती जी अपनी करनी पर सच्चे हृदय से पश्चाताप कर रही हैं। और भगवान श्रीराम जी से विनती करती हैं कि प्रभो! यदि आप दीनदयाल हैं, आर्तहरन हैं तो मेरी विनती स्वीकार कीजिए कि मेरा शरीर जल्दी छूट जाये। यथा

जौं प्रभु दीनदयाल कहावा। आरति हरन वेद जस गावा।।
तौ मैं विनय करउँ कर जोरी। छूटउ वेगि देह यह मोरी।।

कालान्तर में सती जी ने अपने पिता दक्ष के यज्ञ में शिव के अपमान को देखकर योगाग्नि में शरीर को भस्म कर दिया और मरते समय श्री राम जी से यह वर माँगा कि जन्म–जन्म मेरा अनुराग श्री शिवजी के चरणों में हो। इसी कारण उन्होंने हिमांचल के घर में पार्वती शरीर से जन्म लिया। यथा–

सतीं मरत हरि सन बरु मागा। जनम जनम सिवपद अनुरागा।।
तेहि कारन हिमगिरि गृह जाई। जनमीं पारबती तनु पाई।।

निर्गुन-सगुण स्वरूप

पूर्ण ब्रह्म श्रीराम जी

"अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा"

"निर्गुन बह्म सगुन बपु धारी"

पार्वती जी ने तपस्या करके भगवान शिव को वर के रूप में प्राप्त किया। शिवजी और पार्वती जी कैलाश पर विराजमान हैं। सुन्दरता की खानि कामरिपु शिवजी सहज ही वटवृक्ष के नीचे बाघम्बर पर बैठे थे मानो शान्तरस ही शरीर धारण किये बैठा हो। अच्छा अवसर जानकर जगतजननी पार्वती जी अपने संदेह को प्रकट करने के लिए शिवजी के पास गयीं। प्रियतमा समझ कर सादर बाँयी तरफ बैठने के लिए आसन दिये। पार्वती जी भगवान शिवजी को प्रसन्न जानकर बोली– हे प्रभो! आप सर्मथ, सर्वज्ञ, कल्याणस्वरूप, सम्पूर्ण कलाओं और गुणों के धाम तथा योग, ज्ञान एवं वैराग्य के भण्डार हैं। तथा आपका नाम शरणागतों के लिए कल्पवृक्ष हैं। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मेरे अज्ञान को एवं मेरी बुद्धि के भारी भ्रम को श्रीराम कथा के माध्यम से दूर कीजिए। यथा–

जौं मो पर प्रसन्न सुखरासी। जानिअ सत्य मोहि निज दासी।।

तौं प्रभु हरहु मोर अग्याना। कहि रघुनाथ कथा विधिनाना।।

शिवजी के सामने पार्वती जी अपना अज्ञान (संशय) प्रकट करते हुए कहती हैं कि–

प्रभु जे मुनि परमारथवादी। कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी।।

सेस सारदा बेद पुराना। सकल करहिं रघुपति गुनगाना।।

तुम्ह पुनि राम-राम दिन राती। सादर जपहु अनंग आराती।।

राम सो अवध नृपति सुत सोई। की अज अगुन अलखगति कोई।।

जौ नृप तनयत ब्रह्म किमि नारि विरहँ मति भोरि।

देखि चरित महिमा सुनत भ्रमति बुद्धि अति मोरी।।

जौ अनीह व्यापक बिभु कोऊ। कहहु बुझाई नाथ मोहि सोऊ।।

अग्य जानि रिस उर जनि धरहू। जेहि बिधि मोह मिटै सोइ करहू।।

हे प्रभो! जो परमार्थ तत्व के ज्ञाता हैं और वक्ता मुनि हैं, वे श्रीराम जी को अनादिब्रह्म कहते हैं, और शेष, सरस्वती, वेद और पुराण सभी रघुनाथ जी के गुण गाते हैं। और हे कामदेव के शत्रु! आप भी दिन–रात आदरपूर्वक राम–राम जपा करते हैं–ये राम वही अयोध्या के राजा के पुत्र हैं? या अजन्मा निर्गुण और अगोचर कोई और राम हैं? यदि ये राजपुत्र हैं तो ब्रह्म कैसे? और यदि ब्रह्म हैं तो स्त्री के विरह में उनकी मति बावली कैसे हो गयी? इधर उनके ऐसे चरित्र को देखकर और उधर उनको महिमा सुनकर मेरी बुद्धि अत्यन्त भ्रमित हो रही है। इच्छा रहित, व्यापक, समर्थ ब्रह्म कोई और है तो हे नाथ! मुझे उसे समझाकर कहिये। मुझे नादान समझकर मन में क्रोध न लाइये। जिस तरह मेरा मोह (संशय) दूर हो, वही कीजिए।

पार्वती जी बहुत डरी हुई हैं, पूर्व जन्म की बात याद है कि शिवजी के वचनों पर विश्वांस न करने का बुरा परिणाम होता है। अब आपके वचनों पर विश्वास है। क्योंकि पहले (सती काल) जैसा अब विशेष मोह नहीं है। रामकथा पर मन में रूचि है। यथा–

तब कर अस बिमोह अब नाहीं। रामकथा पर रूचि मन माहीं।।

पार्वती जी कहती हैं हे नाथ! अब मुझे केवल रामकथा सुनने की इच्छा है इसलिए प्रश्न कर रही हूँ कि निर्गुण ब्रह्म सगुण शरीर कैसे धारण करता है। इसका कारण बताइये? यथा–

प्रथम सो कारन कहहु बिचारी। निर्गुन ब्रह्म सगुन बपु धारी।।

भगवान शिव सर्वप्रथम उत्तर देने के पूर्व अपने इष्टदेव श्रीराम जी के रूप की वन्दना करते हैं। जिनके नाम जप से सभी सिद्धियाँ सहज में प्राप्त हो जाती हैं। जो मंगल के धाम और अमंगल को दूर करने

वाले हैं। और दशरथ जी के आँगन में विहार करने वाले हैं, वे प्रभु श्रीराम जी मुझ पर द्रवित हों, कृपा करें। यथा–

बंदउँ बालरूप सोई रामू। सब सिधि सुलभ जपत जिसु नामू।।
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

शिवजी के मुख में अमृत बसता है जो दिव्यातिदिव्य है, जिसके पान करने से उस अमरत्व की प्राप्ती होती कि जहाँ से गिरने का भय नहीं रहता है। परमपद की प्राप्ती होती है। एक अमृत स्वर्ग में होता है जिसको पान करके देवता अमर कहलाते हैं और मदोन्मत्त रहते हैं। यह स्वर्ग का अमृत पुण्यात्माओं को मिलता है। पुनः पुण्य क्षीण होने पर स्वर्ग से नीचे गिरा दिये जाते हैं, मृत्युलोक में आ जाते हैं। यथा–"**क्षीणे पुण्ये मर्त्य लोकं विशान्ति।**" ६/२१ लेकिन भगवान शिव के मुख में ऐसा अमृत नहीं है। वह अमृत तो मधुरातिमधुर रामनाम और रामकथा का है जिसका पान करने से आवागमन का चक्कर छूट जाता है और सदा सदा के लिए स्थायित्व भगवतधाम की प्राप्ती होती है। यथा–"**मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।**" (**गीता ८/१६**) धन्य हैं वे जो सतत रामनामामृत और रामकथामृत का पान करके अपने जीवन को मंगलमय एवं सुखमय बनाते हैं। यथा–"**धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं रामनामामृतम्**" **तथा** "**तव कथामृतं तप्तजीवनं ....।**" **भा०** भगवान शिव जी के मुख में रामनामामृत की, अजस अहर्निश धारा प्रवाहित होती रहती है। यथा– "**तुम्ह पुनि राम राम दिन राती। सादर जपहु अनंग आराती।।**" ऐसे सतत रामनामामृत की धारा प्रवाहित करने वाले शिवजी अपने हृदयांगन में श्रीराम जी को बैठाकर अमृतमय बचन बोले–

धन्य धन्य गिरिराजकुमारी। तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।

हे पार्वती! तुम धन्य हो! धन्य हो!! तुमने समस्त लोकों का उपकार कर दिया, तुम्हारे समान कोई उपकारी नहीं है। जो तुमने जगत् पावनी गंगा के समान रामकथा का प्रसंग पूछा है। भगवान की कथा के विषय

में किया हुआ प्रश्न तीनों प्रकार के स्त्री–पुरूषों, वक्ता, प्रश्नकर्ता और श्रोता को पावन करता है जैसे भगवान के चरणाविन्द से निकली गंगा या भगवान का चरणोदक। यथा–

वासुदेव कथा प्रश्नः पुरूषांस्त्रीन पुनाति हि।

वक्तारं पृच्छकं श्रोतॄंस्तत्पाद सलिलं यथा।। (भागवत १०/१/१६)

हे पार्वती! तुमने वही आशंका की है जिसके कहने सुनने से सबका कल्याण होगा। यथा– **तदपि असंका कीन्हिहु सोई। कहत सुनत सबकर हित होई।।** भगवान शिवजी कहते हैं कि पार्वती! तुम्हारे प्रश्न मुझे बहुत अच्छे लगे, क्योंकि श्रीरामतत्त्व–विषयक, परमार्थ साधक और सुखद है इससे सबका कल्याण होगा। लेकिन एक बात मुझे अच्छी नहीं लगी, यद्यपि, तुमने मोहबश ही कहा है। तुमने जो यह कहा कि वे राम कोई और हैं (जो अजन्मा, निर्गुण, अलक्ष्य गति वाले हैं) जिन्हे वेद गाते हैं और जिनका ध्यान मुनि लोग करते हैं। या वे ही दशरथनन्दन हैं? यथा–

तुम्ह जो कहा राम कोउ आना। जेहि श्रुति गाव धरहिं मुनि ध्याना।।

इस बात पर फटकार लगाते हुए शिवजी कहते हैं कि ऐसा बचन अधम मनुष्य कहते हैं, जिन्हें झूठ–सच का कुछ भी पता नहीं है, जो पाखण्डी, हरिपदविमुख, अज्ञानी, अकोविद, अभागी, कपटी और कुटिल हैं जिन्होंने स्वप्न में भी संत समागम नहीं किया है। अर्थात् यदि सतसंग किया होता तो उसे रामकथा मिली होती और रामकथा से उसके सभी संशय (भ्रम) मिट गये होते। यथा–"**बिनु सतसंग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग।**" जिनको निर्गुण सगुण का विवेक नहीं है, जो मनगढ़न्त बातें करते हैं और जिनको भगवान की अविद्यामाया ने संसार के चक्कर में डाल रखा है। वे लोग भगवान को क्या समझेंगे? भगवान को जानने के लिए उनकी कृपा और सन्त महापुरूषों की कृपा चाहिए। यथा–"**सोइ जानइ जेहि देहु जनाई।।**"

पार्वती! अपने हृदय में से ऐसा भ्रम (संदेह) निकाल दो। और श्रीराम जी का भजन करो। अपने भ्रम रूपी अंधकार को नाश करने के लिए सूर्य किरण रूपी मेरे वचन को सुनो–

सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा।।
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।

भगवान शिव जी कहते हैं– हे पार्वती! सगुण और निर्गुण में कोई भेद नहीं है, मुनि, पुराण, पंडित और वेद ऐसा कहते हैं जो निर्गुन, रूप रहित, अलख और अजन्मा है वही भक्त के प्रेमवश सगुन होता है। मुनि, पुराण, बुध और वेदों का प्रमाण देते हुए शिवजी सगुण और निर्गुण में अभेद सम्बन्ध बतलाते हैं। किसी को कोई बात बतायी जाती है तो वह प्रमाण माँगता है। बिना प्रमाण की बातें मान्य नहीं होती हैं। बिना प्रमाणित बात को सामने वाला उसकी अपनी बात मानकर विश्वास नहीं करता है। उसे प्रमाण देना ही पड़ता है। अतएव शिव जी अपनी बातों के साथ वेदादि का प्रमाण देकर पार्वती को समझाते हैं। यहाँ मानस पियूष से क्रमशः मुनि, पुराण, बुध और वेद के प्रमाण निर्गुण और सगुण के अभेद सम्बन्ध में दिये जा रहे हैं–

(क) **''निरञ्जनं निष्प्रतिमं निरीहं निराश्रयं निष्कलमप्रपञ्चम्। नित्यं ध्रुवं निर्विषयस्वरूपं निरन्तरं राममहं भजामि।। रामः सत्यं परं ब्रह्म रामात् किंचिन्न विद्यते तस्माद्रामस्वरूपोऽयं सत्यं सत्यमिदं जगत।।'' (रामस्तवराज ५६, ६४)** अर्थात् निर्मल, निरूपम, इच्छा से रहित, जिनको किसी का आश्रय नहीं है, निरवयव, प्रपञ्च रहित, अविनासी, जिनका स्वरूप निर्विषय है, ऐसे श्रीराम जी को मैं निरन्तर भजता हूँ। श्रीराम जी ही सत्य परब्रह्म हैं। उनके बिना और कुछ नहीं है, अतः यह जगत श्रीराम जी का ही स्वरूप है। (यह बात) सत्य है, अथवा यह जगत् सत्य है।

(ख) **'सत्वादयो न सन्तीशे यत्र च प्राकृता गुणाः। स शुद्धः सर्वशुद्धेभ्यः पुमानाद्यः प्रसीदतु।। योऽसौ निर्गुणः प्रोक्तः शास्त्रेषु**

जगदीश्वरः। प्राकृतैर्हेय सत्वाद्यैर्गुण हीनत्वमुच्यते।। '' (विष्णु पुराण) अर्थात् सत्व, रज और तम ये प्रकृति के गुण हैं। ये गुण भगवान में नहीं हैं। वह सर्व शुद्ध पदार्थों से शुद्ध हैं। वह आदिपुरूष (मेरे ऊपर) प्रसन्न हों। शास्त्रों में जो भगवान को निर्गुण कहा जाता है, इसका तात्पर्य यह है कि भगवान माया के तुच्छ गुणों से रहित हैं।

पुनश्च **''परमानन्द सन्दोहो ज्ञानमात्रश्च सर्वशः। सर्वैगुणैः परिपूर्णः सर्वदोष विवर्जितः।। ''(बाराह पुराण)** अर्थात् वह परमात्मा श्रेष्ठ आनन्द से परिपूर्ण, ज्ञानस्वरूप और सर्वव्यापक है। वह सर्व (दिव्य) गुणों से परिपूर्ण और सर्वदोषों से रहित है।

''समस्त कल्याणगणात्मकोऽसौ स्वशान्ति लेशाद् धृतभूतसर्गः। तेजोबलैश्वर्य महाबोधसुवीर्यशक्त्यादि गुणैकराशिः।। परः परांणा सकला न यत्र क्लेशादयः सन्ति परावरेशे।'' (विष्णु पु० ६/५/८४/८५) अर्थात् सर्वमंगलकारी गुणों से युक्त, अपनी शक्ति के लेशमात्र से जो अनन्त ब्रह्माण्डों को धारण करते हैं, जो तेज, बल, ऐश्वर्य आदि गुणों से युक्त हैं। (हम लोगों की दृष्टि से) श्रेष्ठ (देवता आदि) जिसकी अपेक्षा छोटे हैं, ऐसे जिस ईश्वर में क्लेश आदि कुछ भी नहीं है, वे बड़ों के भी बड़े हैं।

(ग) **''निर्गुणवादाश्च परस्य ब्रह्मणो हेयगुणा सम्बन्धाद्युपपद्यन्ते'' (ज० रामानुजाचार्य श्रीभाष्य)** अर्थात् परमब्रह्म के विषय में (श्रुति पुराण आदि में) जो निर्गुणबोधक वाक्य मिलते हैं उनका परब्रह्म में त्याज्य गुणों का सम्बन्ध होने में प्रतिपादन किया जाता है।

''स्वभानतोऽपास्तसमस्त दोषमशेषकल्याणगुणैकराशिम्'' (ज० निम्बार्काचार्य) अर्थात् समस्त दोषों से रहित और स्वभावतः जिनसे कल्याणकारी दिव्य गुणों का एक समूह स्थित है।

''प्राकृतगुणरहित्वेन दिव्यगुणवत्त्वेन च निर्गुणसगुणपद वाच्यं ब्रह्म एकमेव।'' (बिन्दूवार्य ज० रामप्रसादाचार्य) अर्थात् प्राकृत गुणों से रहित होने से निर्गुण और दिव्य गुणों युक्त होने से सगुण शब्दों से कहा

जाने वाला परब्रह्म एक ही है।

(घ) **''परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च।'' (श्वेताश्वतरोपनिषद ६-८)** इस परब्रह्म की स्वभाविकी ज्ञानबल क्रियात्मक विविध पराशक्ति सुनी जाती है।

''य आत्मापहतपाम्पा विजशे विमृत्युर्विशोको विजिघत्सोऽपिपासः सत्यकामः सत्यसंकल्पः।'' (छान्दोग्य ८/७/१) अर्थात् आत्मा, पाप, जरा, मृत्यु, क्षुधा, पिपासादि से रहित और सत्यकाम सत्यसंकल्प है।

वेदान्त भूषण जी कहते हैं कि जो अगुण है अर्थात सच्चिदानन्द मात्र है, प्राकृत गुण (जैसे काम क्रोधादि) रहित है, जो प्राकृत रूप श्यामत्व, गौरत्व तथा बाल, पौगण्ड, युवा आदि अवस्थापन्न रूप रहित है जिसका रूप अनादि है, जो अलख है अर्थात् जो प्राकृत नेत्रादि इन्द्रियों से अगोचर है किन्तु अपनी शक्ति से ही गोचर होता है। जो माता-पिता के वीर्य से उत्पन्न नहीं एवं जिनका जन्ममरणादि विकारो से रहित शुद्ध सर्वात्मक विग्रह है वे ही भगवान भक्तों के प्रेमवश दिखाने मात्र को प्राकृत गुणों को भी ग्रहण करते हैं। यथा-**''शुद्धं स्वधाम्न्युपरताखिलबुद्ध्यवस्थं चिन्मात्रमेकमभयं प्रतिषिध्य मायाम्। तिष्ठंस्तयैव पुरुषत्वमुपेत्य तस्यामास्ते भवानपरिशुद्ध इवात्मतन्त्रः।। (भागवत ४/७/२६)**

जो गुन रहित सगुन सो कैसे। जल हिम उपल बिलग नहिं जैसे।।
जासु नाम भ्रम तिमिर पतंगा। तेहि किमि कहिअ बिमोह प्रसंगा।।

जो गुण रहित है वही सगुण है यह कैसे? जैसे जल और हिम (ओले) अलग नहीं है। जिसका नाम भ्रमरूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिए सूर्य के समान है। उसमें मोह का सम्बन्ध कैसे हो सकता है अर्थात् मोह उत्पन्न नहीं हो सकता है।

पार्वती जी का कहना है कि जो निर्गुण है वही सगुण कैसे हो सकता है? तब शिवजी निर्गुण को ही सगुण बताकर दोनों में अभेद

सम्बन्ध सिद्ध करते हैं कि जैसे जल और हिम (उपल) में भेद नहीं है, पहले जो जल द्रव रूप में था वही कारण (शैत्य संयोग) पाकर पत्थर (ओला) हुआ और फिर जल हो जाता है। उसी प्रकार पहले जो निर्गुण (अव्यक्त गुण वाला) था वही (भक्त प्रेम रूपी) कारण पाकर सगुण (व्यक्त गुणवाला) हुआ और फिर निर्गुण हो गया। जिसके नाममात्र से भ्रम का नाश होता है, जो दूसरों का भ्रम (मोह) दूर करता है उसमें मोह हो ही नहीं सकता है।

राम सच्चिदानन्द दिनेसा। नहि तहँ मोह निसा लवलेसा।।

सहज प्रकाश रूप भगवाना। नहि तहँ पुनि विग्यान बिहाना।।

हरष विषाद ग्यान अग्याना। जीवधर्म अहमिति अभिमाना।।

राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना।।

श्रीराम जी सच्चिदानन्द सूर्य हैं। वहाँ मोह रूपी रात्रि का लेशमात्र नहीं है। स्वभाविक ही प्रकाश रूप और भगवान (षडैश्वर्य युक्त) हैं। वहाँ विज्ञान रूपी सवेरा ही नहीं होता है। हर्ष, शोक, ज्ञान, अज्ञान, अहं ऐसा जो भी अभिमान अथवा अहंकार है ये सब जीव के धर्म हैं। श्रीराम जी तो ब्रह्म, व्यापाक, परमानन्द स्वरूप, परात्पर स्वामी और पुराण पुरुष हैं, यह सारा जगत जानता है।

श्रीराम जी सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। शंकर जी **"जय सच्चिदानन्द जगपावन"** कहकर जो प्रणाम किये थे, उसी वाक्य को पुष्ट करने के लिए ऐसा कह रहे हैं। अर्थात् सच्चिदानन्द रूप में मोहादि विकार नहीं होता है। सूर्य के सामने रात्रि नहीं आती है। और सूर्योदय होने पर किसी को बताना नहीं पड़ता है कि यह सूर्य है, देखकर ही लोग स्वयं जान जाते हैं। वैसे ही राम जी को सच्चिदानन्द उनके रूप, चरित्र, गुण आदि को देखकर ही मानना पड़ता है। और सच्चिदानन्द स्वरूप मोहापहारी है। यथा—**"चिदानन्द सन्दोह मोहापहारी।"** जैसे सूर्य रात्रि का अपहारी (नाशक) है, वैसे ही सच्चिदानन्द स्वरूप श्रीराम जी मोह

का अपहारी (नाशक) है। अतएव श्रीराम जी सच्चिदानन्द दिनेश है।

एक बार रात्रि (अन्धकार) ने भगवान से कहा कि हे नाथ! सूर्य हमारे शत्रु हैं, मुझे रहने ही नहीं देते हैं, नाश करने पर लगे हैं। तब भगवान ने पूछा–सूर्यदेव! ऐसा क्यों करते हैं? सूर्यदेव बोले–भगवन्! मैंने आज तक रात्रि (अन्धकार) को देखा ही नहीं। विरोध और नाश की तो बात ही क्या? जब मेरे सारथि अरूण रथ सजाते हैं। उसी समय रात्रि भाग जाती है, अन्धकार छिप जाता है। मैं तो उसे देख ही नहीं पाता हूँ। जिसे देखा तक नहीं, उसके साथ विरोध कैसा? अरूणोदय होते ही अन्धकार नष्ट हो जाता है। सूर्य के सामने रात्रि कभी आ ही नहीं सकती है। वैसे ही सच्चिदानन्द के सामने मोह कभी आ ही नहीं सकता है।

श्रीराम जी स्वाभाविक ही प्रकाश रूप हैं। क्योंकि भगवान हैं, किसी के प्रकाश से प्रकाशित नहीं हैं। उन्हीं के प्रकाश से सूर्यादि में प्रकाश (तेज) है। सूर्य में सहज प्रकाश नहीं है। यथा–**"यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्।।" (गीता १५/१२)** .... सूर्य में स्थित जो तेज सम्पूर्ण जगत को प्रकाशित करता है, तथा जो तेज चन्द्रमा में है और जो अग्नि में है उसको तू मेरा ही जान।

श्रीराम जी का परमधाम भी स्वयं प्रकाशमान है। जो श्रीराम जी के स्वाभाविक प्रकाश होने का द्योतक है। यथा–**"न तद्भासयते सूर्यो न शशांकः न पावकः। यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम।।"** अर्थात् जिस परमपद को प्राप्त होकर मनुष्य लौटकर संसार में नहीं आते, उस स्वयं प्रकाश परमपद को न सूर्य प्रकाशित कर सकता है न चन्द्रमा और अग्नि ही, वही मेरा परमधाम है।

सबेरा तो वहाँ ही कहा जा सकता है जहाँ रात रही हो। जहाँ रात है ही नहीं, वहाँ सवेरा कैसे कह सकते हैं? वैसे ही जहाँ अज्ञान रूपी रात्रि है ही नहीं वहाँ यह नहीं कहा जा सकता कि ज्ञान हुआ। जहाँ

मोह रहा हो वही ज्ञान से उसके नाश होने पर विज्ञान रूप सवेरा होना कहा जा सकता है। ज्ञान अज्ञान का होना जीव में स्थापित हो सकता है, श्रीराम जी में नहीं। जीव अज्ञानी है इसलिए उसे ज्ञान का भास होता है जिसमें अज्ञान है ही नहीं उसमें ज्ञान का भास कैसा। जिसने रात्रि को देखा है उसे दिन का भान होगा। जिसने रात्रि देखी ही नहीं और सदा प्रकाश ही में रहता है वह तो यही जानेगा कि केवल यही दशा रहती है। दिन का उसे नाम तक भी मालूम नहीं होगा। इसी प्रकार राम जी में अज्ञान की स्थापना नहीं हो सकती। अतः ज्ञान की स्थापना नहीं की जा सकती। वहाँ तो एक रूप सदा ज्योति ही ज्योति है, प्रकाश ही प्रकाश है, विज्ञान ही विज्ञान है। (यह भाव मानस पियूष से उद्धृत है)

''सोई राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकायपतिमायाधनी'' इस वाक्य को पुष्ट करते हुए शिवजी ने श्रीराम जी को **''राम ब्रह्म व्यापक जग जाना''** कहते हैं। जो पार्वती जी की मान्यता है कि **''जौ नृपतनय त ब्रह्म किमि''** और **''ब्रह्म जो व्यापक विरज अज अकल अनीह अभेद। सो कि देह धरि होई नर.....।।''** श्रीराम जी अन्वय–व्यतिरेक भाव से सर्वत्र सदा विराजमान हैं। **''अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत् स्यात सर्वत्र सर्वदा।''** (भा०) राम जी सब में व्यापत हैं। अर्थात् सबमें रमण करते हैं, यथा–**''रामो रमयतां वरः'**, **''रमते सर्वभूतेषु स्थावरे चरेषु च। सर्वात्मस्वरूपेण यश्च रामेतिकथ्यते।।** अतः श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म व्यापक हैं।

ज० गु० रा० हर्याचार्य्य जी कहा करते हैं कि आपके हाथ में दस रूपये के नोट हों, तो उसमें एक पैसा भी नजर नहीं आयेगा। आपको मात्र कागज दिखाई देता है। आंखे कहती हैं कि यह मात्र कागज है और बुद्धि कहती है–नहीं यह दस रूपये हैं। नोट मात्र कागज दिखाई देता है। वास्तव में नोट में रूपये छिपे हुए हैं। नोट में जो रूपये हैं वे निराकार हैं। अतः दिखाई नहीं देते। वे बुद्धि ग्राह्य है। बुद्धि स्वीकार

करती है कि इस नोट में पैसे हैं और उसी को हम मानते भी हैं। उसी तरह भगवान सबमें विद्यमान हैं पर नेत्र के विषय नहीं बन पाते। उसको हमे बुद्धि के द्वारा जानना चाहिए। अतः संसार में प्राणिमात्र में परमात्मा का दर्शन करने लगे तो हृदय में प्रेम जागृत होगा। हमारा पाप मिटता जायेगा। ऐसी कोई भूमि या कण नहीं है जहाँ परमात्मा का निवास न हो। परमात्मा सब में हैं। जिसके नेत्र प्रेम से भरे हुए है। उसे ही वह नजर आते हैं।

पुरूष प्रसिद्ध प्रकाशनिधि प्रकट परावरनाथ।
रघुकुलमनि मम स्वामि सोइ कहि सिवनायउमाथ।।

जो पुरूष है, प्रसिद्ध है और प्रकाश के भण्डार परावर (माया और जीव) के नाथ रघुकुल में मणि होकर प्रकट हुए हैं वे ही हमारे नाथ हैं। ऐसा कहकर शिवजी ने माथा नवाया। अर्थात् श्रीराम जी को प्रणाम किया।

ज०गु०रा० हर्याचार्य जी के विचार **'श्रीराम जी पुरूष है'** इसके विषय में निम्नलिखित है–

(क) श्रीराम जी पुरूष हैं अर्थात् **''पुरि ब्रह्माण्डे शरीरे वा शेते इति पुरूषः''** ब्रह्माण्ड अथवा शरीर रूपी पुर या नगर में जो शयन करता है वह आत्मा या रामजी पुरूष हैं। क्योंकि **''रमन्ते योगिनोयस्मिन्''** इस जगत में जो पूर्ण है अथवा जिसने अपनी सर्वव्यापकता से इस जगत को पूर्ण कर रखा है उसे पुरूष कहते हैं।

(ख) पूरणार्थक पृ धातु से पूरूष शब्द की निष्पत्ति होती है। **''पूरयति अन्तकरणं स्नेहेन इति पुरूषः श्रीरामः निगद्यते''** अर्थात् अन्तर्यामी रूप से सम्पूर्ण संसार को प्रेम से परिपूर्ण कर देने वाले भगवान राम जी ही पुरूष रूप में कहे जाते हैं।

(ग) अग्रगमनार्थक पुर धातु से कुषन् प्रत्यय करने पर पुरूष शब्द की निष्पत्ति होती है। **''पुरति उन्नति पथि गच्छति गमयति वा इति**

पुरूषः''–जो उन्नति मार्ग पर चलकर लोगों को प्रेरणा देता है वह पुरूष मात्र श्रीरामावतार ही हैं। अपने चरित्र के द्वारा जो समग्र संसार को शिक्षा देते हैं। क्योंकि पुरूष का वह पुरूषार्थ प्रशंसा के योग्य होता है।

श्रीराम जी प्रसिद्ध हैं, अर्थात् सब काल में सब देश में वेद शास्त्रादि में विख्यात हैं। यथा–''**शास्त्रं न तत्स्यात् नहि यत्र रामः काव्यं न तत्स्यात् नहि यत्र रामः। न संहिता यत्र न रामदेवो न सा स्मृतिर्यत्र न रामचन्द्रः।।**'' (पद्मपुराण)

श्रीराम जी प्रकाश निधि है अर्थात् सम्पूर्ण प्रकाश युक्त पदार्थों के जो प्रकाशक हैं, सम्पूर्ण ज्योतिमानों का प्रकाश जिनके प्रकाश के एक क्षुद्रतम अंश द्वारा सम्पादित होता है। सारा जगत जिन के प्रकाश से प्रकाशित है। यथा–''**तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिः।**'' **(मुण्ड २/खण्ड २/६)** ''**तत्वस्वरूपं पुरूषं पुराणं स्वतेजसा पूरित विश्वमेकम्। राजाधिराज रविमण्डलस्थं विश्वेश्वरं राममहं भजामि (सनत्कुमार संहिता)** जिनके रूप में सम्पूर्ण प्रकाश परिपूर्ण है वे ही राम जी प्रकाश निधि हैं।

श्रीराम जी परावरनाथ हैं अर्थात् ''**परे अवराः (न्यूनाः) यत्र**'' इस व्युत्पत्ति के अनुसार परावर का अर्थ है कि जिसमें बड़े से बड़े जाकर छोटे हो जाते हैं। अर्थात् सर्वश्रेष्ठ। यह पर ब्रह्म परमात्मा का वाचक है यथा– ''**भिद्यते ग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः। क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।।**'' **(मुण्डक २/खण्ड श्रुति २)** (उपर्युक्त तीनों भाव मानस पियूष से उदधृत है।) शिवजी ब्रह्म के सम्पूर्ण ऐश्वर्य जो पुरूष, प्रसिद्ध, प्रकाशनिधि, और परावर नाथ हैं। उसे माधुर्य में रघुकुलमणि कहकर दर्शाते हैं कि वही श्रीराम जी प्रकट हुए हैं। जो हमारे आराध्य (स्वामी) हैं।

सब कर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू।।

जो सबको परम प्रकाशक है (अर्थात् जिसके कारण सब का अस्तित्व अनुभव में आता है)वही अनादि (ब्रह्म) अयोध्यापति राम जी हैं। सब जगत प्रकास्य है, माया के अधिष्ठाता, ज्ञान और गुणों के धाम श्रीराम जी प्रकाशक हैं। सब के परम प्रकाशक होने का भाव–करन सुर और जीव ये सब एक ही एक के प्रकाशक हैं और श्रीराम जी परम प्रकाशक हैं। इन्द्रिय–सुर–जीव के प्रकाश से विराट (समष्टि ब्रह्माण्ड गोलक) चैतन्य न हुआ, किन्तु श्रीराम जी के प्रकाश से चैतन्य हुआ। यथा–"**वर्षपूग सहस्रान्ते तदण्डमुदकेशयम्। काल कर्मस्वभावस्थो जीवोऽजीवनमजीवयत्।।**" (भाग० २/५/३४) अर्थात् वह अण्ड एक सहस्र वर्ष तक जल में पड़ा रहा, तदन्तर काल कर्म स्वभावस्थित जीव (सबको अपने स्वरूप में स्थित रखने वाले परमात्मा) ने उस निर्जीव अण्ड को सजीव कर दिया। राम जी अनादि और अवधपति हैं। विषय करणादि के आदि श्रीराम जी है और राम जी का आदि कोई नहीं हैं, वे अनादि है। यहाँ '**अनादि**' देहली दीपक न्याय से राम और अवधपति दोनों के साथ है। अनादि अवधपति का भाव कि अनादि काल से अवधपति हैं। '**अनादि अवधपति**' के कथन से अवध की भी अनादिता सूचित होती है। इस विशेषण से जनाया गया कि त्रेता युग से ही ये अवधपति नहीं हुए किन्तु अनादिकाल से हैं, पुनः '**अनादिराम**' कहने से निर्गुणब्रह्म का बोध होता है इसी से सगुण वाचक पद '**अवधपति**' दिया। अनादिराम कहने में '**रमन्ते योगिनो यस्मिन्**' इस भाव से सब में रमण करने वाला ब्रह्म निर्गुण भी हो सकता है जो अनादि है। परन्तु अयोध्या नरेश कहकर शिवजी यह दर्शाते हैं कि अयोध्या का राजा कोई सगुण साकार ही हो सकता है, निर्गुण तो सिंहासनासीन नहीं हो सकता है। अतएव अयोध्यापति दशरथि राम ही अनादि और पूर्ण ब्रह्म हैं जो सबको प्रकाशित करने वाले हैं अर्थात् जिनसे सूर्य चन्द्रमा आदि सभी प्रकाशित होते हैं।

श्रीराम जी प्रकाशक हैं और जगत प्रकास्य है। अर्थात् अब शिवजी

अन्तर्प्रकाश (भीतर के प्रकाश को कहकर बाहर का प्रकाश कहते हैं) जगत प्रकाशमान है, श्रीराम जी प्रकाशकर्ता हैं। जगत कार्य है, उसमें प्रकाश कह कर जगत के कारण में प्रकाश कहते हैं कि जगत का कारण माया है। श्रीराम जी मायापति हैं, ज्ञानगुणधाम हैं इस कथन का भाव यह है कि माया की जड़ता और अवगुण (विकार) इनमें नहीं आते। ये तो माया को ज्ञान और गुण देते हैं तब उनसे वह जगत की रचना करती है। यथा—**"एक रचइ जग गुन बस जाके।"**

प्रकाशक, मायाधीश, गुणधाम इन विशेषणों को देकर सूचित करते हैं कि श्रीरामचन्द्र जी जगत के प्रकाशक और जगत को रचने वाली माया के भी प्रकाशक हैं। माया को जड़ कहा गया है अर्थात् उसमें अपनी कुछ शक्ति नहीं है। उसमें श्रीराम जी की शक्ति है। अतएव राम जी को माया का स्वामी कहा गया। भुसुण्डि जी भी कहते हैं कि **"माया खलु नर्तकी विचारी"** है जैसा राम जी नचाते हैं वैसा नाचती है यथा—**"सोई प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा।"**

माया अर्थात् माया का कार्य जगत झूठा है और श्रीराम जी सत्य हैं। जैसे जल ठंडा है और अग्नि उष्ण (गर्म) है। इस भेद को न जानने से मनुष्य को यदि गर्म जल दिया जाय तो उसकी उष्णता—धर्म जल का ही समझ लेगा वैसे ही जगत श्रीराम जी में मिला है। मोहवशात् इस भेद को और रामजी को न जानने से अज्ञानी जीव इस सत्यत्व को जगत का ही मान बैठते हैं और उसमें फँसकर दुःख पाते हैं यथा—**जासु सत्यता ते जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया।।** (उपर्युक्त भाव **'मानस पियूष'** से उद्धृत है।)

श्रीराम जी सत्य स्वरूप पूर्ण ब्रह्म हैं। इनमें मोह करना अज्ञानता है। और इस अज्ञानता का लोप बिना श्रीराम जी की कृपा से नहीं होता है यथा—**"जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई। गिरिजा सोई कृपालु रघुराई।।"** इसी कारण शिवजी राम जी के साथ उनकी माया को भी

प्रणाम करते हैं–"बहुरि राममायहिं सिरुनावा। प्रेरि सतिहि जेहिं झूँठ कहावा।।"

शिवजी अब निर्गुण ब्रह्म के स्वरूप को दर्शाते हैं जो सगुण श्रीराम जी हैं-

आदि अन्त कोउजासु न पावा। मति अनुमान निगम अस गावा।।
बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना। कर बिनु करम करइ विधि नाना।।
आनन रहित सकल रसभोगी। बिनु बानी बकता बड़ जोगी।।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा। ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा।।
असि सब भाँति अलौकिक करनी। महिमा जासु जाइ नहिं बरनी।।

जिनका आदि अन्त किसी ने नहीं पाया। वेदों ने बुद्धि से अनुमान करके इस प्रकार गाया है कि वह बिना पैर का चलता है, बिना कान के सुनता है, बिना हाथ के अनेक प्रकार के कर्म करता है। मुख के बिना ही सम्पूर्ण रसों का भोक्ता है, वाणी के बिना ही बड़ा योग्य वक्ता है, शरीर के बिना ही स्पर्श करता है और नेत्रों के बिना ही देखता है। नाक के बिना ही सम्पूर्ण गन्ध को ग्रहण करता है। उस ब्रह्म की करनी सब प्रकार से दिव्य अलौकिक है जिसकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता है।

आदि और अन्त शरीर (तन) धारण करने से होता है उसके तन नहीं है, जैसाकि "**तन बिनु परस........**" कहते हैं। प्राकृत लोगों का जन्म '**आदि**' है और मरण '**अन्त**' है। ये तो स्वतः भगवान, अजन्मा, परात्पर ब्रह्म हैं अतएव अनादि हैं। अवतार में जन्म नहीं होता है, प्रभु प्रकट होते हैं। यथा–"**भये प्रकट कृपाला..........**" **प्रगटे राम कृतग्य कृपाला**"।। "**विस्ववास प्रगटे भगवाना।**" आदि।

ब्रह्म सब जगह व्याप्त है, लेकिन दिखाई नहीं देता है। जब हम उसके नाम को लेकर पुकारते हैं, नाम रटन करते हैं, गामार्थ अनुसंधान करते हैं, विस्वास के साथ प्रेमपूर्वक याद करते हैं, तब प्रकट हो जाता

है। यथा–"हरि व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेम ते प्रगट होहि मैं जाना।।"
"नाम निरूपन नाम जतन ते। सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन ते।।"
वह अजन्मा है, उसके अनन्त नामों में से किसी भी नाम का निरूपण करने से वह प्रकट हो जाता है।

ब्रह्म का वास सबके हृदय में है फिर भी जीव दुःखी है, वह सुखी नहीं है। उसका काम नहीं बनता, अभिष्ट की प्राप्ति नहीं होती, क्या कारण है? सर्वहृदयस्थ ब्रह्म जब निर्गुण से सगुण में आता है तब सबका कल्याण होता है। भक्तों का उद्धार होता है। वे ही पूर्ण ब्रह्म प्रकट होकर श्रीराम रूप में सब जगह कृपा की वृष्टि करते हैं, उद्धार करते हैं, आनन्दित करते हैं, केवल भक्ति के वस में होकर नाम निरूपण से।

गोस्वामी तुलसीदास जी कवितावली में कहते हैं कि–

अंतजामिहुतें बड़े बाहेरजामि हैं राम जे नाम लियेतें।
धावत धेनु पेन्हाई लवाई ज्यों बालक बोलनि कान कियेतें।।
आपनि बूझि कहै तुलसी, कहिबे की न बावरि बात बियेतें।
पैज परें प्रहलादहु को प्रगटे प्रभु पाहन तें न हिये तें।।

कवितावली (३०/१२६)

जो प्रभु सर्वव्यापक हैं, अर्न्तयामी हैं। उन भगवान से तो हमारे बहिर्यामी (सगुण रूप) श्रीराम जी ही बड़े हैं, क्योंकि जब कोई प्रेमपूर्वक उनका नाम पुकारता है तब वे उसे सुनकर इस प्रकार दौड़ते हैं कि जैसे तत्काल की ब्याई हुई गौ अपने बछड़े की बोली सुनकर वात्सल्यभाव से उसकी ओर दौड़ती है। गोस्वामी जी कहते हैं कि मैं अपने समझ की बात कह रहा हूँ, जो बावरी है। और यह बात दूसरे से कहने योग्य नहीं है, (अर्थात् जो लोग सांसारिकता में आबद्ध भगवत् तत्व से रहित (श्रुति–स्मृति ज्ञान से शून्य) सत्संग से वंचित है, जिसको सगुण–निर्गुण का विवेक नहीं है, उनसे ये बात कहने योग्य नहीं है।) यद्यपि प्रह्लाद

जी सर्वव्यापी भगवान के सच्चे विश्वासी और एकनिष्ठ भक्त थे परन्तु जब उनको आवश्यकता पड़ी तो उनकी बात रखने के लिए तथा उनकी रक्षा करने के लिए भगवान ह्रदयस्थ अर्न्तयामी न प्रकट होकर बल्कि बाहर से अर्थात् पत्थर से प्रकट हुए। इस प्रसंग पर विचार करने से निराकार एवं सर्वव्यापी प्रभु का शरीर धारण करना, सुनना, बोलना, चलना तथा भक्त रक्षणार्थ (युद्धादि) कर्म करना भी सिद्ध होता है। अतएव उसका आदि–अन्त नहीं है, वह सर्वत्र हैं आवश्यकता पड़ने पर प्रकट हो जाते हैं।

बिना पैर का चलना, बिना कान के सुनना आदि जो ब्रह्म का स्वरूप बताया गया है। यह गोस्वामी जी शिवजी के मुखारविन्द से श्रुतियों का ही अनुवाद करवा रहे हैं–श्वेताश्वतरोपनिषद् तृतीय अध्याय के अनुसार–

''सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रिय विवर्जितम्..........।।१७।।
''अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षुः स श्रृणोत्यकर्णः। स वेत्ति वेद्यं न च तस्यास्ति वेत्ता समाहुरग्यं पुरूषं महान्तम्।।१६।। अर्थात् वे परमात्मा समस्त इन्द्रियों से रहित होने पर भी समस्त इन्द्रियों के विषयों को जानते हैं। वे हाथों और पैरों से रहित होने पर भी सब जगह समस्त वस्तुओं को ग्रहण करते हैं। और वेगपूर्वक सर्वत्र गमन भी करते हैं। नेत्र के बिना ही देखते हैं, कानों के बिना सब कुछ सुनते हैं। वे समस्त जानने योग्य और जानने में आने वाले समस्त पदार्थो को भली भाँति जानते हैं। परन्तु उनको जानने वाला कोई नहीं है, जो सबको जानने वाला है, भला उसको कौन जान सकता है? उसके विषय में महापुरूष कहते हैं कि वे सबके आदि, पुरातन, महान पुरूष हैं।–मानसपियूष से।

वेदों में जो ब्रह्म के रूप और प्रत्येक इन्द्रियों के साथ ही इन्द्रियों का व्यापार भी वर्णित है यथा–**''ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्।''** (यजु०) इस श्रुति में ब्रह्म का मुख कहा गया है। इसी तरह **''अस्य महतो**

भूतस्य निःश्वसितमेतदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदः।'' (छा०) ''सर्वगन्धः सर्वरसः।'' (वृ०उ०), ''बाहूराजन्यः कृतः'' (यजु०), ''चन्द्रमामनसो जातः'' (यजु०) ''सत्यकामः सत्य संकल्पः'' (छा०), ''इच्छाचक्रे'' और ''तदैक्षत वहुस्याम्'' (छां०) में ब्रह्म का श्वास लेना, सूंघना तथा स्वाद लेना, दो भुजाओं वाला होना, मनवाला, संकल्प करने वाला, इच्छा करने वाला कहकर बुद्धिवाला सूचित किया गया है। ये सब श्रुतियाँ ब्रह्म को शरीर वाला कहती है।—मानसपियूष से।

इस प्रकार से उस ब्रह्म की करनी अलौकिक है क्योंकि उसके विषय में परस्पर विरोधी श्रुतियाँ वेदों में वर्णित हैं, कुछ तो उसे अंग सहित बताती हैं और कुछ अंग रहित। अतएव वह विरूद्धधर्माश्रय है। एक ही समय में विरूद्ध धर्मो की लीला करता है। शिवजी स्पष्ट देख रहे हैं कि जो सहज आनन्द निधान और सुख का धाम है वही आज विरह में व्यथित (दुःखी) है। यथा—

''राम सहज आनन्द निधानू'',

''कबहूँ जोग वियोग न जाकें। देखा प्रगट बिरह दुख ताकें।।''

भगवान के सारे कर्म अप्राकृत हैं, दिव्य हैं, चिन्मय शरीर है। यथा—

''चिदानन्दमय देहँ तुम्हारी। बिगत विकार जान अधिकारी।।

नरतनु धरेउ संत सुर काजा। कहहु करहु जस प्राकृत राजा।।

अप्राकृत (अलौकिक) होते हुए भी प्राकृत (लौकिक) मनुष्य सी लीला कर रहे हैं। इस प्रकार विरूद्ध धर्माश्रयी भगवान की लीला अलौकिक है। जो इस प्रकार से वर्णन करते हुए वेद, बुध (विद्वान) गाते हैं और मुनि लोग जिनका ध्यान धरते हैं वे ही भगवान (जो अवतार काल में भी षडैश्वर्य से युक्त) दशरथ पुत्र होकर कोशलपति (अयोध्या नरेश) हुए हैं। अतएव श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म हैं। और सर्वान्तर्यामी, चराचरनायक श्रीराम जी हमारे इष्टदेव हैं। जिनके नामबल से मैं

अपनी काशीपुरी में जीवों को ज्ञान देकर मुक्त करता हूँ। यथा–

कासी मरत जन्तु अवलोकी। जासु नाम बल करौं बिसोकी।।

सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी। रघुवर सब उर अंतरजामी।।

शिवजी के सन्देह निवारक वचन को सुनकर पार्वती जी के कुतर्क की रचना (राम जी को ब्रह्म न मानकर मनुष्य मानना, विरही और अज्ञानी मानना) मिट गयी। श्रीराम जी के चरणारविन्द में प्रीति और प्रतीति हो गयी। हाथ जोड़कर पार्वती जी बोलीं– हे कृपालु! मेरे सारे सन्देह नष्ट हो गये और श्रीराम जी के स्वरूप का बोध हो गया। यथा–

तुम्ह कृपालु सब संसय हरेउ। राम स्वरूप जानि मोहि परेउ।।

पार्वती जी श्रीराम जी को पूर्णब्रह्म मान लीं। क्योंकि इन्हें **"जौ नृपतनय त ब्रह्म किमि"** यही भ्रम था। यह भ्रम नष्ट होकर श्रीराम स्वरूप का ज्ञान हुआ। स्वयं पार्वती जी कह पड़ी कि श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म हैं यथा–

राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी। सर्व रहित सब उर पुर वासी।।

श्रीराम जी ब्रह्म, ज्ञानमय केवल चैतन्य स्वरूप, अविनासी (सब में रहते हुए भी) सबसे अलग अर्थात् निर्लिप्त और सब के हृदय रूपी नगर में रहने वाले (सर्वव्यापक) हैं। अर्थात् ब्रह्म के सम्पूर्ण लक्षणों को श्रीराम जी में आरोपित करके उन्हें पूर्ण ब्रह्म स्वीकार कर लीं, और सतत् शिवजी के साथ रामनाम का जप करने लगीं।

सप्तसोपान में पूर्ण ब्रह्म श्रीराम- एक दृष्टि

बालकाण्ड

गोस्वामी तुलसीदास जी- सच्चिदानन्द श्रीराम

यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादि देवासुरा,
यत्सत्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौ यथा हेर्भ्रमः।
यत्पादप्लवमेकमेव हि भवाम्भोधेस्तितीर्षावतां,
वन्देऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्।।।

जिनकी माया के वशीभूत सम्पूर्ण विश्व, ब्रह्मादि देवता और असुर हैं जिनकी सत्ता से रस्सी में सर्प के भ्रम की भाँति यह सारा दृश्य–जगत सत्य ही प्रतीत होता है। और जिनके केवल चरण ही भवसागर से तरने की इच्छा वालों के लिए एक मात्र नौका हैं, उन समस्त कारणों से परे (सब कारणों के कारण और सबसे श्रेष्ठ) राम कहलाने वाले भगवान हरि की मैं वन्दना करता हूँ।

समुझत अमित राम प्रभुताई। करत कथा मन अति कदराई।।
सारद सेस महेस बिधि आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन करहि निरंतर गान।।१२।।
एक अनीह अरूप अनामा। अज सच्चिदानंद परधामा।।
व्यापक विश्वरूप भगवाना। तेहि धरि देह चरित कृत नाना।।

श्रीराम जी की असीम प्रभुता को समझकर कथा रचने में मेरा मन बहुत हिचकता है। सरस्वती, शेष जी, शिवजी, ब्रह्मा जी, शास्त्र वेद और पुराण–ये सब **'नेति-नेति'** कहकर (पार न पाकर **'ऐसा नहीं'**, **'ऐसा नहीं'** कहते हुए) सदा जिनका गुणगान किया करते हैं।

जो एक परमेश्वर है, जिनकी कोई इच्छा नहीं है, जिनका कोई रूप

नहीं है, जो अजन्मा, सच्चिदानन्द और परमधाम है, और जो सबमें व्यापक एवं विश्वरूप है। उन्ही भगवान ने दिव्य शरीर धारण करके (श्रीराम रूप में) नाना प्रकार की लीला की है।

प्रकाशरूप, अन्तर्यामी-श्रीराम

शिवजी–

राम सच्चिदानन्द दिनेसा। नहि तहँ मोह निसा लवलेसा।।
सहज प्रकाश रूप भगवाना। नहि तहँ पुनि बिग्यान बिहाना।।
हरष बिषाद ग्यान अग्याना। जीव धर्म अहमिति अभिमाना।।
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानन्द परेस पुराना।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू।।
जासु सत्यता ते जड़ माया। भास सत्य इव मोह सहाया।।
कासी मरत जंतु अवलोकी। जासु नाम बल करउँ बिसोकी।।
सोई प्रभु मोर चराचर स्वामी। रघुवर सब उर अंतर जामी।।

श्रीरामचन्द्र जी सच्चिदानन्द स्वरूप सूर्य हैं, वहाँ मोह रूपी रात्रि का लवलेश भी नहीं है। वे स्वभाव से ही प्रकाश रूप और (षडैश्वर्य युक्त) भगवान हैं, वहाँ तो विज्ञान रूपी प्रातःकाल भी नहीं होता (अज्ञान रूपी रात्रि हो तब तो विज्ञान रूपी प्रातःकाल हो, भगवान तो नित्य ज्ञान स्वरूप हैं)। हर्ष, शोक, ज्ञान, अज्ञान, अहंता और अभिमान, ये सब जीव के धर्म हैं। श्रीराम जी तो व्यापक ब्रह्म, परमानन्द स्वरूप, परात्पर प्रभु और पुराणपुरूष हैं। इस बात को सारा जगत जानता है। सबका जो परम प्रकाशक है (अर्थात् जिससे सबका प्रकाश होता है), वही अनादि ब्रह्म अयोध्यानरेश श्रीरामचन्द्र जी हैं। यह जगत प्रकाश्य है और श्रीराम जी इसके प्रकाशक हैं। वे माया के स्वामी और ज्ञान तथा गुणों के धाम हैं। जिनकी सत्ता से, मोह की सहायता पाकर जड़ माया भी सत्य सी भासित होती है।

जिनके नाम के बल से काशी में मरते हुए प्राणी को देखकर मैं उसे (राममन्त्र देकर) शोक रहित कर देता हूँ (मुक्त कर देता हूँ), वही

मेरे प्रभु रघुश्रेष्ठ-श्रीरामचन्द्र जी जड़—चेतन के स्वामी और सबके हृदय के भीतर की जानने वाले हैं।

पार्वती—

राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी। सर्ब रहित सब उरपुर वासी।।

नाथ धरेउ नर तन केहि हेतू। मोहि समुझाइ कहहु वृषकेतू।।

श्रीराम जी ब्रह्म हैं, चिन्मय (ज्ञानस्वरूप) हैं, अविनाशी हैं, सबसे रहित और सबके हृदय रूपी नगरी मे निवास करने वाले हैं। (यह बात सत्य है) फिर हे नाथ! उन्होंने मनुष्य का शरीर किस कारण से धारण किया? हे धर्म की ध्वजा धारण करने वाले प्रभो! यह मुझे समझाकर कहिए।

परमप्रभु-श्रीराम

स्वायम्भू मनु-शतरूपा

उर अभिलाष निरंतर होई। देखिअ नयन परम प्रभु सोई।।
अगुन अखंड अनंत अनादी। जेहि चिंतहिं परमारथ बादी।।
नेति नेति जेहि बेद निरूपा। निजानंद निरूपाधि अनूपा।।
संभु बिरंचि बिष्नु भगवाना। उपजहि जासु अंत ते नाना।।
ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई। भगत हेतु लीला तनु गहई।।

हृदय में निरन्तर यही अभिलाषा हुआ करती है कि हम (कैसे) उन परमप्रभु (श्रीराम जी) को आँखों से देखें, जो निर्गुण, अखण्ड, अनन्त और अनादि हैं और परमार्थवादी (ब्रह्मज्ञानी तत्ववेत्ता) लोग जिनका चिन्तन किया करते हैं। जिन्हें वेद **'नेति-नेति'** (यह भी नहीं, यह भी नहीं) कहकर निरूपण करते हैं। जो आनन्द स्वरूप, उपाधि रहित और अनुपम हैं, एवं जिनके अंश से अनेक शिव, ब्रह्मा और विष्णु भगवान प्रकट होते हैं। ऐसे महान प्रभु भी सेवक के वश में हैं और भक्तों के लिए (दिव्य) लीला विग्रह धारण करते हैं।

शतरूपा–

तुम्ह ब्रह्मादि जनक जग स्वामी। ब्रह्म सकल उर अंतरजामी।।

हे प्रभु (श्रीराम जी)! आप ब्रह्मा आदि के भी पिता (उत्पन्न करने वाले) जगत के स्वामी और सबके हृदय के भीतर की जानने वाले ब्रह्म हैं।

(भक्तिवत्सल) कौशल्यासुत-श्रीराम

ब्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगत बिनोद।
सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या के गोद।।१९८।।
सुख सन्दोह मोह पर ग्यान गिरा गोतीत।

दम्पति परम प्रेमबस कर सिसु चरित पुनीत।।१९६।।

मन क्रम बचन अगोचर जोई। दशरथ अजिर बिचर प्रभु सोई।।

निगम नेति सिव अंत न पावा। ताहि धरै जननी हठि धावा।।

व्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप।

भगत हेतु नाना विधि करत चरित्र अनूप।।२०५।।

जो व्यापक, निरञ्जन (माया रहित), निर्गुण, विनोद रहित और अजन्मा ब्रह्म है, वही प्रेम और भक्ति के वश कौशिल्या जी के गोद में (खेल रहे) हैं। जो सुख के पुञ्ज, मोह से परे तथा ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों से अतीत हैं, वे भगवान, दशरथ–कौशल्या के अत्यन्त प्रेम के वश होकर पवित्र बाल लीला करते हैं। जो मन, कर्म और वचन से अगोचर हैं, वही प्रभु दशरथ जी के आँगन में विचर रहे हैं। जिनका वेद **'नेति'** (इतना ही नहीं) कहकर निरूपण करते हैं और शिवजी ने जिनका अन्त नहीं पाया, माता उन्हें हठपूर्वक पकड़ने के लिए दौड़ती हैं। जो व्यापक अकल (निरवयव), इच्छा रहित, अजन्मा और निर्गुण हैं; तथा जिनका न नाम है न रूप, वही भगवान भक्तों के लिए नाना प्रकार के अनुपम (अलौकिक) चरित्र करते हैं।

वशिष्ठ–

जो आनन्द सिन्धु सुखरासी। सींकर ते त्रैलोक सुपासी।।

सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक विश्रामा।।

ये जो आनन्द के समुद्र और सुख की राशि हैं, जिस (आनन्द सिन्धु) के एक कण से तीनों लोक सुखी होते हैं, उन (आपके बड़े पुत्र) का नाम **'राम'** है; जो सुख के भवन और सम्पूर्ण लोकों को शान्ति देने वाला है।

एक रस-श्रीराम

जनक—

राम करौं केहि भाँति प्रसंसा। मुनि महेस मन मानस हंसा।।
करहि जोग जोगी जेहि लागी। कोह मोह ममता मद त्यागी।।
व्यापक ब्रह्म अलख अबिनासी। चिदानंद निरगुन गुनरासी।।
मन समेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहि सकल अनुमानी।।
महिमा निगम नेति कहि कहई। जो तिहुँ काल एकरस रहई।।
नयन बिषय मो कहुँ भयउ सो समस्त सुखमूल।
सबइ लाभ जग जीव कहँ भएँ ईसु अनुकूल।।३४१।।

हे राम जी! मैं किस प्रकार आपकी प्रशंसा करूँ। आप मुनियों और महादेव जी के मन रूपी मानसरोवर के हंस हैं। योगी लोग जिनके लिए क्रोध, मोह, ममता और मद को त्यागकर योग—साधना करते हैं; जो सर्वव्यापक, ब्रह्म, अव्यक्त, अविनाशी, चिदानंद, निर्गुण और गुणों की राशि हैं। जिनको मन समेत वाणी नहीं जानती और सब जिनका अनुमान ही करते हैं; कोई तर्कना नहीं कर सकते, जिनकी महिमा को वेद **'नेति'** कहकर वर्णन करता है और जो (सच्चिदानन्द) तीनों कालों में एकरस (सर्वदा और सर्वथा निर्विकार) रहते हैं, वे ही समस्त सुखों के मूल (आप) मेरे नेत्रों के विषय हुए। ईश्वर के अनुकूल होने पर जगत में जीव को सब लाभ—ही—लाभ है।

अयोध्याकाण्ड

सहज आनन्दनिधान-श्रीराम

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा न मम्ले वनवास दुःखतः।

मुखाम्बुज श्रीरघुनन्दनस्य में सदास्तु सा मञ्जुलमंगलप्रदा।।

(अयोध्या म० २)

रघुकुल को आनन्द देने वाले श्रीरामचन्द्र जी के मुखारविन्द की जो शोभा राज्याभिषेक से (राज्याभिषेक की बात सुनकर) न तो प्रसन्नता को प्राप्त हुई और न वनवास के दुःख से मलिन ही हुई, वह (मुख कमल की छवि) मेरे लिए सदा सुन्दर मंगलों की देने वाली हो।

मन मुसुकाइ भानुकुल भानू। राम सहज आनन्द निधानू।।

सूर्यकुल के सूर्य, स्वाभाविक ही आनन्दनिधान श्रीरामचन्द्र जी मन में मुस्कुराये।

सकल विकार रहित-श्रीराम

लक्ष्मण—

रामब्रह्म परमारथ रूपा। अविगत अलख अनादि अनूपा।।

सकल बिकार रहित गतभेदा। कहि नित नेति निरूपहि वेदा।।

भगत भूमि भूसुर सुरभि सुरहित लागि कृपाल।।

करत चरित धरि मनुज तनु सुनत मिटहि जगजाल।।६३।।

श्रीराम जी परमार्थ स्वरूप परब्रह्म हैं। वे अविगत (जानने में न आने वाले), अलख (स्थूल दृष्टि से देखने में न आने वाले), अनादि (आदि रहित), अनुपम (उपमारहित), सब विकारों से रहित और भेदशून्य हैं, वेद जिनका नित्य 'नेति-नेति' कहकर निरूपण करते हैं। वही कृपालु श्रीराम जी भक्त, भूमि, ब्राह्मण, गौ और देवताओं के हित के लिए मनुष्य शरीर धारण करके लीलाएं करते हैं, जिनके सुनने से जगत के जंजाल मिट जाते हैं।

बाल्मीकि—

श्रुति सेतु पालक राम तुम्ह जगदीस माया जानकी।

जो सृजति जग पालति हरति रूख पाइ कृपानिधान की।।

जो सहस सीस अहीस महिधरु लखन सचराचर धनी।।

सुरकाज धरि नरराज तनु चले दलन खल निसिचर अनी।।

राम स्वरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धि पर।

अविगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह।।१२६।।

हे राम! आप वेद की मर्यादा के रक्षक जगदीश्वर हैं और जानकी जी (आपकी स्वरूपभूता) माया हैं। जो कृपा के भण्डार आपकी रूख (इशारा) पाकर जगत का सृजन, पालन और संहार करती हैं। जो हजार मस्तकवाले सर्पों के स्वामी और पृथ्वी को अपने सिर पर धारण

करने वाले है, वही चराचर के स्वामी शेष जी लक्ष्मण जी हैं। देवताओं के कार्य के लिए आप राजा का शरीर धारण करके दुष्ट राक्षसों की सेना का नाश करने के लिए चले हैं। हे राम! आपका स्वरूप वाणी के अगोचर, बुद्धि से परे, अव्यक्त, अकथनीय, और अपार हैं। वेद निरन्तर उसका **'नेति-नेति'** कहकर वर्णन करते हैं।

जग पेखन तुम्ह देखनिहारे। विधि हरि संभु नचावनिहारे।

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

चिदानंदमय देह तुम्हारी। विगत विकार जान अधिकारी।।

हे राम! जगत दृश्य है, आप उसके देखने वाले हैं। आप ब्रह्मा, विष्णु और शंकर को भी नचाने वाले हैं। आपकी देह चिदानन्दमय (यह प्रकृतिजन्य पंचमहाभूतों की बनी हुई कर्मबन्धनयुक्त, त्रिदेह विशिष्ट मायिक नहीं है) है। और सब विकारों (उत्पत्ति–नाश, वृद्धि–क्षय आदि) से रहित हैं; इस रहस्य को अधिकारी पुरूष ही जानते हैं।

अरण्यकाण्ड

निर्गुण-सगुण श्रीराम

अत्रि स्तुति–

तमेकमद्भुतं प्रभुं। निरीहमीश्वरं विभुं।।
जगद्गुरूं च शाश्वतं। तुरीयमेव केवलं।।
भजामि भाव वल्लभं। कुयोगिनां सुदुर्लभं।।
स्वभक्त कल्प पादपं। समं सुसेव्यमन्वहं।।

जो एक (अद्वितीय), अद्भुत (मायिक जगत् से विलक्षण), प्रभु (सर्वसमर्थ), इच्छारहित, ईश्वर (सबके स्वामी), व्यापक, जगद्गुरू, सनातन (नित्य), तुरीय (तीनों गुणों से सर्वथा परे) और केवल (अपने स्वरूप में स्थित) हैं, जो भाव प्रिय, कुयोगियों (विषयी पुरूषों) के लिए अत्यन्त दुर्लभ, अपने भक्तों के लिए सुलभ कल्पवृक्ष (अर्थात् उनकी समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले), सम (पक्षपातरहित) और सदा सुखपूर्वक सेवन करने योग्य हैं, उन (श्रीराम) को मैं निरन्तर भजता हूँ।

सुतीक्ष्ण स्तुति–

निर्गुण सगुण विषम सम रूपं। ज्ञान गिरा गोतीतमनूपं।।
अमलमखिलमनवद्यमपारं। नौमि राम भंजन महि भारं।।

हे निर्गुण, सगुण विषम और समरूप। हे ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों, से अतीत! हे अनुपम, निर्मल, सम्पूर्ण दोष रहित, अनन्त एवं पृथ्वी का भार उतारने वाले श्रीरामचन्द्र जी! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

अगस्त्य स्तुति–

जद्यपि ब्रह्म अखंड अनंता। अनुभवगम्य भजहि जेहि संता।।
अस तव रूप बखानउँ जानउँ। फिरि फिरि सगुन ब्रह्म रति मानउँ।।

हे राम! यद्यपि आप अखण्ड और अनन्त ब्रह्म हैं; जो अनुभव से ही जानने में आते हैं और जिनका सन्तजन भजन करते हैं। यद्यपि मैं आपके ऐसे रूप को जानता हूँ और उसका वर्णन भी करता हूँ तो भी लौट-लौट कर मैं सगुण ब्रह्म (आपके इस सुन्दर स्वरूप) में ही प्रेम करता हूँ।

गीध स्तुति–

जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुन प्रेरक सही।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

बलमप्रमेयमनादिमजमव्यक्तमेकमगोचरं ।

गोविन्द गोपर द्वन्द्वहर बिग्यानघन धरनीधरं।।

जेहि श्रुति निरञ्जन ब्रह्म व्यापक विरज अज कहि गावहीं।

करिध्यान ग्यानविराग जोग अनेक मुनि जेहि पावहीं।।

xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx

सो राम रमानिवास संतत दास बस त्रिभुवन धनी।

मम उर बसउ सो सभन संसृति जासु कीरति पावनी।।

हे राम जी! आपकी जय हो। आपका रूप अनुपम है, आप निर्गुण हैं, सगुण हैं और सत्य ही गुणों (माया) के प्रेरक हैं।

आप अपरिमित बलवाले हैं, अनादि, अजन्मा, अव्यक्त (निराकार), एक, अगोचर (अलक्ष्य), गोविन्द (वेदवाक्यों द्वारा जानने योग्य), इन्द्रियों से अतीत, द्वन्द्वों को हरने वाले, विग्यान की घनमूर्ति और पृथ्वी के आधार हैं।

जिनको श्रुतियाँ निरञ्जन (माया से परे), ब्रह्म, व्यापक, निर्विकार और जन्मरहित कहकर गान करती हैं।

वे तीनों लोकों के स्वामी, रमानिवास श्रीराम जी निरन्तर अपने दासों के वश में रहते हैं, वे ही मेरे हृदय में निवास करें, जिनकी पवित्र कीर्ति आवागमन को मिटाने वाली है।

किष्किन्धा काण्ड

मनुज तनुधारी ब्रह्म-श्रीराम

हनुमान–

जगकारन तारन भव भंजन धरनी भार।
कीतुम्ह अखिल भुवनपति लीन्ह मनुज अवतार।।

हे राम! क्या आप जगत के मूल कारण और सम्पूर्ण लोकों के स्वामी स्वयं भगवान हैं, जिन्होंने लोगों को भवसागर से पार उतारने तथा पृथ्वी का भार नष्ट करने के लिए मनुष्य रूप में अवतार लिया है।

जामवन्त–

तात राम कहुँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु।।
हम सब सेवक अति बड़भागी। संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी।।
निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग लहँ रहहि मोच्छ सब त्यागि।।

हे तात! (अंगद)! श्रीराम जी को मनुष्य न मानो, उन्हें निर्गुण ब्रह्म, अजेय और अजन्मा समझो। हम सब सेवक अत्यन्त बड़भागी हैं जो निरन्तर सगुण ब्रह्म में प्रीति रखते हैं।

देवता, पृथ्वी, गौ और ब्रह्मणों के लिए प्रभु अपनी इच्छा से (किसी कर्मबन्धन से नहीं) अवतार लेते हैं। वहाँ सगुणोपासक (भक्तगण (सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सर्ष्टि अर्थात् सायुज्य) सब प्रकार के मोक्षों को त्याग कर उनकी सेवा में साथ रहते हैं।

चन्द्रमा मुनि–

त्रेताँ ब्रह्म मनुज तनु धरिहीं। तासु नारि निसिचरपति हरिहीं।।
तासु खोज पठइहि प्रभु दूता। तिन्हहि मिलें तैं होब पुनीता।।

(चन्द्रमा मुनि ने सम्पाती से कहा–) त्रेतायुग में साक्षात् पर ब्रह्म मनुष्य शरीर धारण करेंगे। (अर्थात् पूर्णब्रह्म ही श्रीराम रूप में होंगे) उनकी स्त्री को राक्षसों का राजा (रावण) हर ले जायेगा। उसकी खोज में प्रभु दूत भेजेंगे। उनसे मिलने पर तूँ पवित्र हो जायेगा।

सुन्दरकाण्ड

शान्तं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाणशान्तिप्रदं,
ब्रह्मा शम्भु फणीन्द्र सेव्यमनिशं वेदान्तवेद्यं विभुम्।
रामाख्यं जगदीश्वरं सुरगुरुं मायामनुष्यं हरिं,
बन्देऽहं करूणाकरं रघुवरं भूपालचूडामणिम्।।

शान्त, सनातन, अप्रमेय (प्रमाणों से परे), निष्पाप, मोक्षरूप, परम शान्ति देने वाले, बह्मा, शम्भु और शेष जी से निरन्तर सेवित वेदान्त के द्वारा जानने योग्य, सर्वव्यापक, देवताओं में सबसे बड़े, माया से मनुष्य रूप में दिखनेवाले, समस्त पापों को हरने वाले, करूणा की खान, रघुकुल में श्रेष्ठ तथा राजाओं के शिरोमणि राम कहलाने वाले जगदीश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।

विभिषण–

तात राम नहि नर भूपाला। भुवनेश्वर कालहु कर काला।।
ब्रह्म अनामय अज भगवन्ता। व्यापक अजित अनादि अनन्ता।।
गो द्विज देव धेनु हितकारी। कृपा सिन्धु मानुष तनुधारी।
जन रंजन भंजन खल ब्राता। वेद धर्म रच्छक सुन भ्राता।।

हे तात! राम मनुष्यों के राजा ही नहीं हैं। वे समस्त लोकों के स्वामी और काल के भी काल हैं। वे (सम्पूर्ण ऐश्वर्य, यश, श्री, धर्म, वैराग्य एवं ज्ञान के भण्डार) भगवान हैं। वे निरामय (विकार रहित), अजन्मा, व्यापक, अजेय, अनादि और अनन्त ब्रह्म हैं। उन कृपा के समुद्र भगवान ने पृथ्वी, ब्राह्मण, गौ और देवताओं का हित करने के लिए ही मनुष्य शरीर धारण किया है। हे भाई! सुनिये, वे सेवकों को आनन्द देने वाले, दुष्टों के समूह का नाश करने वाले और वेद तथा धर्म की रक्षा करने वाले हैं।

मन्दोदरी–

विश्वरूप रघुबंस मनि करहु वचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर अंग अंग प्रति जासु।।
पद पाताल सीस अज धामा। अपर लोक अंग अंग विश्रामा।।
भृकुटि बिलास भयंकर काला। नयन दिवाकर कच घन माला।।
जासु घ्रान अश्विनी कुमारा। निसि अरू दिवस निमेष अपारा।।
श्रवन दिसा दस वेद बखानी। मारूत स्वास निगम निज बानी।।
अधर लोभ जम दसन कराला। माया हास बाहु दिगपाला।।
आनन अनल अंबुपति जीहा। उतपति पालन प्रलय समीहा।।
रोम राजि अष्टादस भारा। अस्थि सैल सरिता नस जारा।।
उदर उदधि अधगो जातना। जगमय प्रभु का बहु कलपना।।
अहंकार सिव बुद्धि अज मन ससि चित्त महान।
मनुज बास सचराचर रूप राम भगवान।।

(हे प्राणनाथ!) मेरे इन वचनों पर विश्वास कीजिये कि वे रघुकुल के शिरोमणि श्रीरामचन्द्र जी विश्वरूप हैं– (यह सारा विश्व उन्हीं का रूप है) वेद जिनके अंग–अंग में लोकों की कल्पना करते हैं।

पाताल (जिन विश्वरूप भगवान का) चरण है, ब्रह्मलोक सिर है, अन्य (बीच के सब) लोकों का विश्राम (स्थिति) जिनके अन्य भिन्न–भिन्न अंगों पर है। भयंकर काल जिनका भृकुटि संचालन (भौहों का चलना) है, सूर्य नेत्र है, बादलों का समूह बाल हैं। अश्विनी कुमार जिनकी नासिका है, रात और दिन जिनके अपार निमेष (पलक मारना और खोलना) है। दसों दिशाएं कान हैं, वेद ऐसा कहते हैं। वायु श्वास है और वेद जिनकी अपनी वाणी है। लोम जिनका आधार (होठ) है,

यमराज भयानक दांत हैं, माया हँसी है, दिक्पाल भुजाएँ हैं। अग्नि मुख है, वरुण जीभ है। उत्पत्ति, पालन और प्रलय जिनकी चेष्टा (क्रिया) हैं। अट्ठारह प्रकार की असंख्य वनस्पतियाँ जिनकी रोमावली हैं, पर्वत अस्थियाँ हैं, नदियाँ नसों का जाल है, समुद्र पेट है और नरक जिनके नीचे की इन्द्रिया हैं। इस प्रकार प्रभु विश्वमय हैं, अधिक कल्पना (ऊहापोह) क्या की जाय?

शिव जिनका अहंकार है, ब्रह्मा बुद्धि है, चन्द्रमा मन है और महान् (विष्णु) ही चित्त हैं। उन्हीं चराचर रूप भगवान श्रीराम जी ने मनुष्य रूप में निवास किया है।

देवबृन्द–

तुम्ह समरूप ब्रह्म अविनासी। सदा एकरस सहज उदासी।।
अकल अगुन अज अनघ अनामय। अजित अमोघसक्ति करूनामय।।

(हे रघुनाथ जी!) आप समरूप, ब्रह्म, अविनासी, नित्य, एकरस, स्वभाव से ही उदासीन (शत्रु–मित्र–भाव रहित), अखण्ड, निर्गुण, अजन्मा, निष्पाप, निर्विकार, अजेय, अमोघशक्ति (जिनकी शक्ति कभी व्यर्थ नहीं होती) और दयामय हैं।

बह्मा–

अवतार उदार अपारं गुनं। महि भार विभंजन ग्यान घनं।।
अज व्यापकमेकमनादि सदा। करूनाकर राम नमामि मुदा।।

(हे प्रभो!) आपका अवतार श्रेष्ठ, अपार दिव्य गुणों वाला, पृथ्वी का भार उतारने वाला और ज्ञान का समूह है। (किन्तु अवतार लेने पर भी) आप नित्य, अजन्मा, व्यापक, एक (अद्वितीय) और अनादि हैं। हे करूणा की खान श्रीराम जी! मैं आपको बड़े ही हर्ष के साथ नमस्कार करता हूँ।

उत्तरकाण्ड

एक-श्रीराम

यजुर्वेद–

अव्यक्तमूलमनादि तरू त्वच चारि निगमागम भने।
षट्कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने।।
फल जुगल विधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार विटप नमामहे।।

(हे राम जी!) वेद–शास्त्रों ने कहा है कि जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) है; जो (प्रवाह रूप से) अनादि हैं जिसके चार त्वचाएं, छः तने, पच्चीस शाखाएं और अनेक पत्ते और बहुत से फूल हैं; जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकार के फल लगे हैं; जिस पर एक ही बेल है जो उसी के आश्रित रहते हैं; जिसमें नित्य नयें पत्ते और फूल निकलते रहते हैं, ऐसे संसार वृक्ष स्वरूप (विश्वरूप में प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं।

सनकादिक–

जय भगवंत अनंत अनामय। अनघ अनेक एक करूनामय।।
जय निर्गुन जय जय गुन सागर। सुख मंदिर सुंदर अति नागर।।
xxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxxx
सर्ब सर्बगत सर्ब उरालय। बससि सदा हम कहुँ परिपालय।।
द्वंद बिपति भव फंद बिभंजय। हृदि बसि राम काम मद गंजय।।

हे भगवन्! आपकी जय हो। आप अन्तरहित, विकार रहित, पापरहित, अनेक (सब रूपों में प्रकट), एक (अद्वितीय) और करूणामय हैं। हे निर्गुण! आपकी जय हो। हे गुण के सागर! आपकी जय हो, जय हो। आप सुख के धाम (अत्यन्त) सुन्दर और अति चतुर हैं।

आप सर्वरूप हैं, सब में व्याप्त हैं और सबके हृदय रूपी घर में सदा निवास करते हैं। अतः आप हमारा परिपालन कीजिए। (राग–द्वेष, अनुकूलता–प्रतिकूलता, जन्म–मृत्यु आदि) द्वन्द, विपत्ति और जन्म–मृत्यु के जाल को काट दीजिए। हे राम जी! आप हमारे हृदय में बसकर काम और मद का नाश कर दीजिए।

काग भुसुण्डि–

सोइ सच्चिदानन्द घन रामा। अज बिग्यान रूप बल धामा।।

ब्यापक ब्याप्य अखंड अनंता। अखिल अमोघसक्ति भगवंता।।

अगुन अदभ्र गिरा गोतीता। सबदरसी अनवद्य अजीता।।

निर्मम निराकार निरमोहा। नित्य निरंजन सुख सन्दोहा।।

प्रकृति पार प्रभु सब उर वासी। ब्रह्म निरीह विरज अबिनासी।।

श्रीराम जी वही सच्चिदानन्द घन हैं, जो अजन्मा, विज्ञानस्वरूप, रूप और बल के धाम, सर्वव्यापक एवं व्याप्य (सर्वरूप), अखण्ड, अनन्त, सम्पूर्ण, अमोघशक्ति (जिसकी शक्ति कभी व्यर्थ नहीं होती) और छः ऐश्वर्यो से युक्त भगवान हैं। वे निर्गुण, महान, वाणी और इन्द्रियों से परे सब कुछ देखने वाले, निर्दोष, अजेय, ममतारहित, निराकार, मोह रहित, नित्य, माया रहित, सुख की राशि, प्रकृति से परे, प्रभु (सर्वसमर्थ) सदा सबके हृदय में बसने वाले, इच्छा रहित, विकार रहित, अविनाशी ब्रह्म हैं।

ग्यान अखंड एक सीतावर । माया बस्य जीव सचराचर।।

जौ सबकें रह ग्यान एकरस। ईश्वर जीवहि भेद कहहु कस।।

माया बस्य जीव अभिमानी। ईश बस्य माया गुन खानी।।

परबस जीव स्वबस भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकंता।।

एक सीतापति श्रीरामचन्द्र जी ही अखण्ड ज्ञानस्वरूप हैं और जड़–चेतन सभी जीव माया के वशीभूत है। यदि जीवों को एकरस

(अखण्ड) ज्ञान रहे, तो कहिये, फिर ईश्वर और जीव में भेद ही कैसा? अभिमानी जीव माया के वश है और वह (सत्त्व, रज, तम) इन तीनों गुणों की खान माया ईश्वर के वश में है, जीव परतन्त्र है, भगवान स्वतन्त्र है; जीव अनेक है और श्रीपति भगवान (श्रीराम जी) एक हैं।

अतः गोस्वामी तुलसी दास जी ने प्रायः विभिन्न पात्रों के माध्यम से श्रीराम जी को पूर्णब्रह्म सिद्ध किया है। इस प्रकार पूरे रामचरित मानस में श्रीराम जी के ब्रह्म स्वरूप की विवेचना करने वाली उक्तियाँ भरी पड़ी है।

ब्रह्म श्रीराम

मानव के रूप में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों, मर्यादाओं और मान्यताओं की श्रेष्ठ एवं व्यवहार–योग्य परंपरा स्थापित करने वाले राम को तुलसी ने अपनी भक्ति–भावना के कारण ब्रह्म के रूप में चित्रित किया है। राम के मानव व्यवहार को वे **'लीला'** के रूप में रखते हैं और अलौकिक आचरण को उनका ब्रह्मत्व घोषित करते हैं।

राम के जीवन में ऐसे बहुत कम अवसर आये हैं, जब उन्होंने अपने को ब्रह्म बताने का प्रयास किया हो। तुलसी ने प्रायः विभिन्न पात्रों के माध्यम से राम के इस रूप को उजागर किया है। सती के सन्देह करने पर स्वंय शिव कहते हैं–

मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत विमल मन जेहि ध्यावहीं।
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं।।
सोई राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकाय पति माया धनी।
अवतरेउ अपने भगतहित निजतंत्र नित रघुकुलमनी।।

–ज्ञानी, मुनि जोगी और सिद्ध निरन्तर निर्मल चित्त से जिनका ध्यान करते हैं तथा वेद–पुराण और शास्त्र **'नेति-नेति'** कहकर जिनकी कीर्ति गाते हैं– उन्हीं सर्वव्यापक, समस्त ब्रह्माण्डों के स्वामी, मायापति, नित्य परमस्वतन्त्र, ब्रह्मरूप भगवान श्रीराम ने अपने भक्तों के हित के लिए रघुकुल के मणिरूप में अवतार लिया है।

राम के ब्रह्मत्व का प्रमाणपत्र देने के लिए शिव से उपयुक्त और कौन हो सकता था? उनकी उक्ति का बल पाकर राम का ब्रह्मत्व प्रमाणित हो गया।

कुछ ऐसे प्रसंग मिलते हैं, जिनमें स्वयं राम यह संकेत देते हैं कि वे ब्रह्म हैं।

शबरी के पास राम का ब्रह्म रूप प्रकट होता है। राम उसे उपदेश

देते हैं कि उन्हें किस तरह से पाया जाता है; भक्ति कितनी तरह की होती है।

कह रघुपतिसुनुभामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता।।

– श्रीराम ने कहा – हे शबरी मेरी बात सुन! मैं केवल एक भक्ति का सम्बन्ध मानता हूँ।

इसके बाद राम नवधाभक्ति का बखान करते हैं। इस प्रकार का विश्वास ब्रह्म राम ही दे सकते थे। लेकिन राम केवल राजपुत्र होते तो ऐसी बातें नहीं करते–

जोगि बृंद दुरलभ गति जोई। तो कहुँ आजु सुलभ भइ सोई।।

– श्रीराम कहते हैं– जो गति योगियों के लिए दुर्लभ है, वही आज तुम्हें सहज ही प्राप्त हो गयी है।

इतना ही नहीं; राम इससे भी आगे जाते हैं और नितान्त स्पष्टता के साथ अपने ब्रह्म रूप को प्रकट करते हैं। शबरी की भक्ति के सामने राम अपने सहज रूप को खोलकर रख देते हैं–

मम दरसन फल परम अनूपा। जीव पाव निज सहज सरूपा।।

– हे शबरी, मेरे दर्शन का परम अनुपम फल यह है कि जीव अपने सहज स्वरूप को प्राप्त कर लेता है।

विभिषण को शरण में लेते समय भी राम अपने ब्रह्म रूप का बोध कराते हैं। जब सुग्रीव उन्हे सलाह देते हैं कि विभिषण रावण का जासूस भी हो सकता है, अतः उसे शरण न दी जाये, तब राम जो भाषा बोलते हैं, वह एक बनवासी राजकुमार की भाषा नहीं, ब्रह्म की भाषा है।

सन्मुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं।।

जीव ज्यों ही मेरे सम्मुख होता है, त्यों ही उसके करोड़ो जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं।

यह अधिकारपूर्ण घोषणा ब्रह्म राम के सिवा और कोई नहीं कर सकता। राम की यही उक्ति उन्हें ब्रह्म सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है।

राम अपने ब्रह्म रूप का उल्लेख नारद से भी करते हैं। जब सीताहरण के बाद राम विरह से व्याकुल थे तो नारद को बहुत दुख हुआ। उनको इस बात की ग्लानि हो रही थी कि मेरे ही शाप देने के कारण राम को **'नारि-विरह'** का दुःख भोगना पड़ा है। भक्त के शाप को भी प्रभु अंगीकार कर लेते हैं।

नारद राम के पास जाते हैं तो प्रभु उन्हें हृदय से लगा लेते हैं। इससे नारद को बहुत सन्तोष मिलता है। उसके मन में यह आशंका बनी हुई थी कि राम मेरे ही शाप के कारण दुःख झेल रहे हैं। अतः वे मुझे शायद नहीं अपनायेंगे। लेकिन हुआ इसके विपरीत। राम ने उन्हें पास बैठाकर हाल–चाल पूछा। राम की इस उदारता से प्रभावित होकर नारद एक वर माँगते है; लेकिन पहले से ही उन्हें वचनबद्ध करा लेते हैं, जिससे वे वर देने में आनाकानी न करें।

जनकहुँ कछु अदेय नहिं मोरें। अस विश्वास तजहु जनि भोरें।।

– संसार में ऐसा कुछ भी नहीं है जो मैं अपने भक्त को न दे सकूँ। यह विश्वास भूलकर भी न छोड़ना।

राम का यह कथन उनके ब्रह्म रूप का, दयामय रूप का बहुत स्पष्ट परिचय देता है। इस आश्वासन को पाकर नारद कहते हैं कि हे प्रभु, यद्यपि आप के अनेक नाम हैं; लेकिन मैं चाहता हूँ कि राम नाम का प्रभाव सबसे अधिक हो–यह नाम सभी पापों को नष्ट करने वाला बनें।

राम वचनबद्ध थे, इसलिए उन्होंने स्वीकृति दे दी। यदि राम ब्रह्म नहीं होते तो इस तरह का वचन देने का साहस उन्हें नहीं होता। मनुष्य राम के वश की यह बात भी नहीं थी। तब उनके पास नारद आते भी नहीं।

राजसिंहासन पर बैठने के बाद राम जब लंका से साथ आये अपनी मित्र मंडली को विदा करना चाहते हैं तो उस समय भी वे राजा के रूप में नहीं बोलते–

अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्वगत सर्वहित जानि करेहू अति प्रेम।।

– हे सखा सब लोग घर जाओ। वहाँ दृढ़ नियम से मुझे भजते रहना। मुझे सदा सर्वव्यापक और सबका हित करने वाला जानकर अत्यन्त प्रेम करना।

इस दोहे में **'भजेहु'** और **'सर्वगत'** शब्द राम के ब्रह्मत्व को व्यक्त करते हैं। मित्र दूसरे मित्र को याद कर सकता है, लेकिन भजने के लिए प्रभु ही होते हैं। इसी तरह राजा **'सर्वहित'** करने वाला तो हो सकता है, लेकिन **'सर्वगत'** होने के लिए परमात्म स्वरूप होना जरूरी है।

राम अपने श्रीमुख से स्वयं ब्रह्म होने की कथा अपने पुरवासियों को भी बताते हैं। राजा होने के बाद राम ने एक बार अपने राज्य के सभी महत्वपूर्ण व्यक्तियों का आदर्श विवेचित करते हुए कहा था–

बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथहि गावा।।

– बड़े भाग्य से यह मनुष्य शरीर मिला है। सभी ग्रन्थों ने यही कहा है कि यह शरीर देवताओं को भी कठिनता से मिलता है।

कठिनता से मिले शरीर का अच्छे से अच्छा उपयोग करने की सलाह राम अपने पुरवासियों को देते हैं। अनेक बातें समझाते हुए उन पर आचरण करने के लिए लोगों को प्रेरित करते हुए राम जो बात कहते हैं, वह एक सामान्य राजा नहीं कह सकता–

सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई।।

– हे भाई, मेरी भक्ति का मार्ग सुलभ और सुखदायक है। पुराणों और वेदों ने इसे गाया है।

वेद और पुराण तो हमेशा ब्रह्म के गुण गाते हैं, ईश्वर की लीला का ही आख्यान करते हैं। अतः राम का ब्रह्मत्व स्वतः सिद्ध हो जाता है। राम अपने मुख से कह देते हैं कि मेरी भक्ति करो, यही वेद–पुराणों का मत है।

अतः ब्रह्म राम और **'राजा राम'**, दोनों की ओर हमारी दृष्टि होनी चाहिए। लोक और परलोक दोनों में, राम के पदचिन्हों पर चलना सहायक हो सकता है। जो रूप हमें सहज लगे, उसे ही हम पकड़कर आगे बढ़ें। राजा राम को पकड़ने से ब्रह्म राम भी मिलेंगे, और ब्रह्म राम को यदि आपने पकड़ लिया तो कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जायेगा।

राजेन्द्र अरुण कृत **''हरिकथा अनन्ता''** से–

पूर्णब्रह्म श्रीराम

प्राचीन काल से लेकर अब तब बहुत से वक्ता एवं श्रोतागण श्रीराम जी परस्वरूप परमात्मा हैं या नहीं, शका प्रकट की है। अथवा संकीर्ण दृष्टि के विद्वानों ने श्रीमद्भागवतकार वेद व्यास के दृष्टिकोण को न समझ सकने के कारण या संकीर्ण दृष्टिकोण के कारण जानबूझकर यह भ्रान्ति उन्पन्न करने की कुचेष्टा की है। भागवत् में ऐसा लिखा गया है कि भगवान श्रीराम बारह कला के अवतार और भगवान श्री कृष्ण सोलह कला के अवतार थे। इसलिए भगवान श्रीराम पूर्ण अवतार नहीं थे और भगवान श्रीकृष्ण पूर्ण अवतार थे। इस प्रकार की भ्रान्तियाँ जन साधारण में फैलाना बहुत बड़ी भूल है।

पहली बात तो यह है कि ब्रह्म में कला होती ही नहीं है। यदि ब्रह्म में कला स्वीकार करेंगे तो ब्रह्म में घटने बढ़ने का दोष भी स्वीकार करना पड़ेगा, जबकि ब्रह्म अव्यय है। अव्यय का अर्थ है कि जो सदा एकरस रहे कभी घटे–बढ़े नहीं। शास्त्रों में बार–बार ऐसा उल्लेख मिलता है कि ब्रह्म में कला होती ही नहीं है। जैसे–

व्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप।

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

ब्रह्म जो व्यापक विरज अज अकल अनीह अभेद।

इस प्रकार अनेक ग्रन्थों में प्रमाण मिलते हैं कि ब्रह्म अकल अर्थात् कला रहित है। इसलिए ब्रह्म में कला मानेंगे तो घटने–बढ़ने का दोष आ जायेगा। अतएव कला के आधार पर पूर्ण अथवा अपूर्ण अवतार नहीं माना जा सकता है।

दूसरी बात यह है कि कला के आधार पर ही पूर्ण अथवा अपूर्ण अवतार स्वीकार करेंगे तो श्रीराम इतने बड़े हो जायेंगे कि उनकी तुलना में श्रीकृष्ण बहुत छोटे हो जायेंगे। वह क्यों और कैसे? तो यह सर्व सम्मत से प्रमाणित है कि जैसे वायु का गुण स्पर्श है सुगन्ध या

पूर्णब्रह्म श्रीराम

प्राचीन काल से लेकर अब तब बहुत से वक्ता एवं श्रोतागण श्रीराम जी परस्वरूप परमात्मा हैं या नहीं, शकां प्रकट की है। अथवा संकीर्ण दृष्टि के विद्वानों ने श्रीमद्भागवतकार वेद व्यास के दृष्टिकोण को न समझ सकने के कारण या संकीर्ण दृष्टिकोण के कारण जानबूझकर यह भ्रान्ति उन्पन्न करने की कुचेष्टा की है। भागवत् में ऐसा लिखा गया है कि भगवान श्रीराम बारह कला के अवतार और भगवान श्री कृष्ण सोलह कला के अवतार थे। इसलिए भगवान श्रीराम पूर्ण अवतार नहीं थे और भगवान श्रीकृष्ण पूर्ण अवतार थे। इस प्रकार की भ्रान्तियाँ जन साधारण में फैलाना बहुत बड़ी भूल है।

पहली बात तो यह है कि ब्रह्म में कला होती ही नहीं है। यदि ब्रह्म में कला स्वीकार करेंगे तो ब्रह्म में घटने बढ़ने का दोष भी स्वीकार करना पड़ेगा, जबकि ब्रह्म अव्यय है। अव्यय का अर्थ है कि जो सदा एकरस रहे कभी घटे–बढ़े नहीं। शास्त्रों में बार–बार ऐसा उल्लेख मिलता है कि ब्रह्म में कला होती ही नहीं है। जैसे–

व्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप।

x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x x

ब्रह्म जो व्यापक विरज अज अकल अनीह अभेद।

इस प्रकार अनेक ग्रन्थों में प्रमाण मिलते हैं कि ब्रह्म अकल अर्थात् कला रहित है। इसलिए ब्रह्म में कला मानेंगे तो घटने–बढ़ने का दोष आ जायेगा। अतएव कला के आधार पर पूर्ण अथवा अपूर्ण अवतार नहीं माना जा सकता है।

दूसरी बात यह है कि कला के आधार पर ही पूर्ण अथवा अपूर्ण अवतार स्वीकार करेंगे तो श्रीराम इतने बड़े हो जायेंगे कि उनकी तुलना में श्रीकृष्ण बहुत छोटे हो जायेंगे। वह क्यों और कैसे? तो यह सर्व सम्मत से प्रमाणित है कि जैसे वायु का गुण स्पर्श है सुगन्ध या

दुर्गन्ध नहीं। परन्तु मार्ग में सुगन्ध या दुर्गन्ध जो भी मिल जाता है उसे वायु अपने साथ ले आता है। जैसे हम चेतन आत्माओं का काम क्रोध, लोभ आदि गुण नहीं है। परन्तु जब हम एक शरीर से दूसरे शरीर में जाने लगते हैं तब हम अपने पिछले जन्मों के संस्कारों को लेकर जन्म लेते हैं। और साथ-साथ जिस कुल में जन्म लेते हैं उसके कुल के गुण-दोषों को भी हम धारण करते हैं। उसी प्रकार श्रीमद्भागवत के कथनानुसार बारह कला और सोलह कला का रहस्य है। अर्थात् श्रीराम जी ने सूर्यकुल में अवतार लिया और श्रीकृष्ण जी ने चन्द्रकुल में अवतार लिया। अतएव सूर्य की बारह कला होती है अर्थात् सूर्य बारह हैं। और चन्द्रमा की सोलह कला होती है। यही श्रीराम जी में बारह कला और श्रीकृष्ण जी में सोलह कला है। इस आधार पर अर्थात् कलाओं के आधार पर बड़ा छोटा माने तो सूर्य इतने बड़े हो जायेंगे कि उनके सामने चन्द्रमा जुगनू हो जायेंगे। अतएव इस आधार पर श्रीराम इतने बड़े हो जायेंगे कि जिसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती है। चन्द्रमा भू उपग्रह है और सूर्य सम्पूर्ण सौर्यमण्डल को प्रकाशित करने वाला एक विशालतम ग्रह है। पृथ्वी चौबीस से छब्बीस हजार मील की गोलाई में है, लगभग साढ़े आठ हजार मील इस पृथ्वी की मोटी पर्त है। जबकि सूर्य चौबीस से छब्बीस लाख मील का है। जिसका साढ़े आठ लाख मील मोटा पर्त है, दो ढाई लाख मील की ऊँची प्रचण्ड लपटें उठती रहती हैं सूर्य में। अब आप विचार करें कि श्रीराम कितने बड़े और श्रीकृष्ण कितने छोटे हो गये। परन्तु यथार्थ तो यह है कि श्रीराम और श्रीकृष्ण में अपूर्ण और पूर्ण अवतार, छोटा और बड़ा भेद पैदा करना महान अपराध है। अतः दोनों ही पूर्ण अवतार हैं, पूर्ण ब्रह्म हैं।

श्रीराम पूर्ण ब्रह्म हैं। अर्थात् ब्रह्म लिखने में चार अक्षरों का प्रयोग करते हैं ब् र् ह् म्। इन चारों अक्षरों की संख्या बनती है १०८।

यथा– **ब् = २३ वाँ व्यंजन**

र् = २७ वाँ व्यंजन

ह = ३३ वाँ व्यंजन

म् = २५ वाँ व्यंजन

कुल योग = १०८

अब इस १०८ की संख्या को जोड़ेंगे

तो १+०+८=९ होगा। यह नव ही पूर्ण संख्या है।

ब्रह्म की जो संख्या १०८ है। उसमें एक ब्रह्म का वाचक है, शून्य माया का और आठ जीव का वाचक है।

परबस जीव स्ववस भगवंता। जीव अनेक एक श्रीकंता।।

ब्रह्म क्या है? इसे जानने के लिए ब्रह्म, माया और जीव इन तीनों को जानना पड़ेगा। यही श्रुति का वाक्य है। यथा–

एतज्जगेयं नित्यमेवात्संस्थं नातः परं वेदितव्यं किंचित्।

भोक्ता भोग्यं प्रेरितारं च मत्वा सर्वं प्रोक्तं त्रिविधं ब्रह्ममेतत्।।

अर्थात् यही जानने योग्य है कि जो नित्य तुम्हारे आत्मा में स्थित है। भोक्ता (जीव), भोग्य (प्रकृति), प्रेरक (परमात्मा) तीनों को जानना ही सम्पूर्ण रूप से ब्रह्म को जानना है।

उपर्युक्त एक सौ आठ में आठ अर्थात् भोक्ता (जीव), शून्य अर्थात् भोग्य (प्रकृति) और एक अर्थात् प्रेरक (ब्रह्म) है। अतः एक सौ आठ की तीनों संख्या मिलकर नव संख्या बनी। जो नव पूर्ण संख्या है।

अब सीताराम पद में सीता और राम दोनों एक साथ मिलकर अथवा अलग–अलग पूर्ण ब्रह्म के प्रतीक हैं। जैसा–

सीता = स् + ई + त् + आ

= स् = ३२ वां व्यंजन

= ई = ४ वां स्वर

= त् = १६ वां व्यंजन

= आ = २ दूसरा स्वर

सम्पूर्ण योग = ५४

अर्थात् दोनों संख्याओं का योग ५+४=९ है जो पूर्ण अंक है।

राम = र् + आ + म्

= र् = २७ वां व्यंजन

= आ = २ दूसरा स्वर

= म् = २५ वां व्यंजन

सम्पूर्ण योग = ५४

अर्थात् दोनों संख्याओं का योग ५+४=९ है जो पूर्ण अंक है।

सीताराम पद के दोनों संख्याओं का योग ५४+५४=१०८ है अर्थात् तीनों सख्याओं का योग नव हुआ। यहाँ तात्पर्य है नव से। जो नव पूर्ण अंक है। अतः श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म हैं।

— मानस महारथी **श्री त्यागी जी**

चित्रकूट, उ० प्र०

श्रीयेनमः छंदमत्तगजेंद्र

नाथ विनय सुनिये जुदयानिधि जानिसुदास कृपा करियेजू।
ज्योंजुविभीषणपैसुढरे रमेणेशहुपैअबत्यों ढरियेजू।।
कीजियेनाथ अजामिलकी सुधिमोअघकोनहिये धरियेजू।
मैं अघमोचन जानिगह्योपदसोकरिये अघ को हरियेजू।।१

छन्द दुमिला

शबरीपर नाथ करीकरूणा वह कौन कुलीन कहौ किन जू।
तुम वानर भालु निहाल किये कितवैदिकयाग कियोतिनजू।।
गति गीधहिंदीन्हि सुकीन्हिक्रिया नित ही नित मांसभख्योजिनजू।।२
जिहिं पाप हत्याहरिवालिवही अघनाथ सुकंठकरैनित जू।
पुनिसोईविभीषण कीन्हिकुचालकृपालु, न नेकु धरी चित जू।।
नहि दासनको अपराधगिन्यो तुम दीनदयालु कियो हित जू।
अति आरत दीन पुकारत हैं रमणेशकिबेरगये कितजू।।३

छंदचंद्रकला

कुबरी प्रभु कौन कुलीन रहीजिहिंसोंरति कीन्हि स्वलोक पठाई।
उपनैनभयोकबग्वालनको जिनकीब्रज में नित जूठन खाई।।
शुभसाधनव्याधकियो कहँ जाहि पठायहुधामविमान चढ़ाई।
अतिकोमल चित्तसदा अस क्यों रमणेश की वेरधरी निठुराई।।४
कबगोपबधूपति धर्मवतीनिजसोंकरिप्रीति दियो निजधामा।
नयतीजुअजामिल भक्त कियोगणिका कब जाईवसीशुभठामा।।
भरिअंक मिल्योजिहिसों उठिकै नहिंनाथहतो धनवान सुदामा।
रमणेशकिनाथ सुनौविनती फुर कीजिये आजुदयानिधिनामा।।५

दुर्योधन के पकवानतजे छिलका निज भक्तसुगेहमें खाये।
जह बानि तुम्हारिसदाअजुहै निहकिंचनही तुमकोनित भाये।।
हरिदीनदयालु गरीबनिवाज सुलोकहुवेदचहूं युग गाये।
रमणेशविभोअतिदीन अहैनमिलैजगमो सम खोज लगाये।।६
अपराधगनौममतोजुसुनौतजि के पतिधर्म भई तब मीरा।
शुचिता जग में सुप्रसिद्ध भली करमाकलिमें ब्रज में जुअहीरा।।
रइदाससुवैदिकपूजक हैं कबनेमगह्यो वन में बसि कीरा।
रमणेशहुयाचत है हरि सोंरघुवीर हरौ ममसंसृति पीरा।।७
तुमहींगति हौ तुमही पति हौ तुमही धनहौ तुमहीं जनहौं जू।
तुमही गुण अवगुणग्राहक हौ तुमहीं भगिनी युवतिजनहौंजू।।
तुमहीममित्र पिता तुमहीं तुमहीं तनुहौतुमहीं मन हौं जू।
रमणेश करैं कहलौं विनती तुमहींमम सर्वस जीवन हौंजू।।८
दोहा–
यह करूणाअष्ट को पढ़ै, जोजननितमनलाइ।
सीतापति दशरथसुवन, ताकी करैंसाहाइ।।

श्रीराम जी पूर्ण ब्रह्म हैं

श्री अवधपुरी जिन धाम कहिये, निकट सरयू श्री गंग हैं।
दशरथनन्दन असुर भंजन, सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।।
राघव रामजी पूरण ब्रह्म हैं।
सहित सीता भ्रात-लक्ष्मण, धनुषधारी सीताराम जी हैं।
चित्रकूट तप लोक कहिये, सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।।
राघव राम जी पूरण ब्रह्म हैं।
भाल तिलक विशाल लोचन, आनन्दकारी सीतारामजी हैं।
सांवलि सूरति माधुरी मूरति, सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।।
राघव राम जी पूरण ब्रह्म हैं।
लंकापुरी छिन माहिं जारेउ, आज्ञाकारी श्री हनुमानजी हैं।
रावण मारि विभीषण स्थापेउ, सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।
राघव रामजी पूरण ब्रह्म हैं।
अष्ठ सिद्धि नवनिधि के दाता, भक्ति मुक्ति वरदायकम्।
योग ध्यान स्वरूप सुन्दर, सियाराम पूरण ब्रह्म हैं।
राघव रामजी पूरण ब्रह्म हैं।
ब्रह्माशेष महेश नारद, कोटि अट्ठासी ऋषि मुनि देवता।
इन्द्रादिक सनकादिक ध्यावहिं, सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।
राघव राम जी पूरण ब्रह्म हैं।
अनन्त कला युगचार प्रगटे, सप्त द्वीप नव खण्ड हैं।
आदि अन्त मध्य खोजि देखो, सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।
राघव रामजी पूरण ब्रह्म हैं।

चेतन है छिनमाँहि चेतो, जुग जुगन् लीला रची।

सियाराम जी कर्त्ता, रियाराम जी भर्ता सियारामजी पूर्ण ब्रह्म हैं।

राघव रामजी पूरँण ब्रह्म हैं।

"सियारामजी अष्ठक पढ़त निश दिन,

सियाराम जी धाम सिंधावहिं

श्री गुरू रामानन्द अवतार अद्भुत,

सियाराम जी पूरण ब्रह्म हैं।

राघव राम जी पूरण ब्रह्म हैं।

श्रीराम के १०८ नामों का विवरण:

ॐ श्री रामो रामचन्द्रश्च रामभद्रश्च शाश्वतः।
राजीवलोचनः श्रीमान् राजेन्द्रो रघुपुंगवः।।
जानकीवल्लभो जैत्रो जितामित्रो जनार्दन।
विश्वमित्रप्रियो दान्तः शरण्यत्राणतत्परः।।
वालिप्रमथनो वाग्मी सत्यवाक् सत्यविक्रमः।
सत्यव्रतो व्रतफलः सदा हनुमदाश्रयः।।
कौशलेशः खरध्वंसी विराधवधपण्डितः।
विभिषणपरित्राता दसग्रीवशिरोहरः।।
सप्ततालप्रभेत्ता च हरकोदण्डखण्डनः।
जामदग्न्यमहादर्प दलनस्ताडकान्तकृत्।।
वेदान्तपारो वेदात्मा भवबन्धैकभेषजः।
दूषणत्रिशिरोऽरिश्च त्रिमूर्तिस्त्रिगुणस्त्रयी।।
त्रिविक्रमस्त्रिलोकात्मा पुण्यचारित्रकीर्तनः।
त्रिलोकरक्षको धन्वी दण्डकारण्यवासकृत्।।
अहल्यापावनश्चैव पितृभक्तो वरप्रदः।
जितेन्द्रियो जितक्रोधो जितलोभो जगद्गुरुः।।
ऋक्षवानरसंघाती चित्रकूट समाश्रयः।
जयन्तत्राणवरदः सुमित्रापुत्रसेवितः।।
सर्वदेवाधिदेवश्च मृतवानरजीवनः।
मायामारीचहन्ता च महाभागो महाभुजः।।
सर्वदेव स्तुतः सौम्यो ब्रह्मण्यो मुनिसत्तमः।

महायोगी महोदारः सुग्रीवस्थिरराज्यदः।।
सर्वपुण्यादिक फलः स्मृतसर्वाघनाशनः।
आदि पुरूषो महापुरूषो परमः पुरूषस्तथा।।
पुण्योदयो महासारः पुराणपुरूषोत्तमः।
स्मितवक्त्रो मितभाषी पूर्वभाषी च राघवः।।
अनन्तगुणगम्भीरो धीरोदात्तगुणोत्तरः।
मायामानुष चारित्रो महादेवाभिपूजितः।।
सेतुकृज्जितवारीशः सर्वतीर्थमयो हरिः।
श्यामांगः सुन्दरः शूरः पीतवासा धर्नुर्धरः।।
सर्वयज्ञाधिपो यज्ञो जरामरणवर्जितः।
शिवलिंगप्रतिष्ठाता सर्वाघगणवर्जितः।।
परमात्मा परं ब्रह्म सच्चिदानन्दविग्रहः।
परं ज्योति परं धाम पराकाशः परात्परः।।
परेशः पारगः पारः सर्वभूतात्मकः शिवः।
इति रामचन्द्रस्य नाम्नामष्टोत्तर शतम्।।

''आरती श्री रामचन्द्र जी की'

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।
आरती उतारूँ तनमन बारूँ,
हे राजाराम तेरी आरती उतारूँ।।
कनक सिंहासन राजत जोरी,
दशरथ नन्दन जनक किशोरी,
हे राजाराम तेरी आरती उतारूँ।
बामभाग शोभित जग जननी,
चरण विराजत है सुत अंजनी,
हे राजाराम तेरी आरती उतारूँ।
छन छन प्रति यह रूप निहारूँ,
प्रभु पद कंजन नैक विसारूँ,
सुन्दरता पर त्रिभुवन वारूँ,
हे राजाराम तेरी आरती उतारूँ।
आरती उतारूँ तनमन वारूँ।
हे राजाराम तेरी आरती उतारूँ।।

।। आरती अवधबिहारी की ।।

आरती अवधबिहारी की, जगत माँ जनक दुलारी की।

1) मुकुट की शोभा अपरम्पार, कान में कुंडल झलकदार
गले में चमक रहे हैं हार, तिलक सुखकंद, हरत दुखद्वंद,
हरत मुखचंद-धन्य छवि भवभय हारी की ।।जगत माँ।।

2) सुभगसिंहासन छवि भारी, विराजे धनुष बाण धारी,
संग सोहे सीता प्यारी, पीतपट चमक, दामिनी दमक,
पैजिनी छमक-बनी शोभा सिय प्यारी की ।।जगत माँ।।

3) चरण को चाँप रहे बजरंग, छलक रह्यो हृदय राम को रंग,
रहे नित सीतावर के संग। धन्य महावीर, बड़े रणधीर,
हरे सब पीर-जयति जय मंगलकारी की ।।जगत माँ।।

4) पधारे कृपा करि रघुनाथ, जनक पुत्री को लाए साथ,
किये हम सबको प्रभु सनाथ, धन्य महाराज, सुधारे काज
रखो सब लाज-आज सबही नरनारी की ।।जगत माँ।।

5) भरो भक्ति मन में निश्चल, निहारे राम रूप पलपल,
बने बुद्धि सात्विक निर्मल। सुनो भगवान, भक्ति और ज्ञान
देहु वरदान-अरज सुन नम्र पुजारी की ।।जगत माँ।।

श्री श्री १०८ श्रीरघुवरदास जीम

स्थानः

राम बाग वासुदेव घाट माझा

अयोघ्या, जिलाः फैजाबाद (उत्तर प्रदेश)